शम्बर कन्या

[पौराणिक नाटक]

नाटककार

श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी

हिन्दी संस्करण के संपादक

साहित्याचार्य पंडित सीताराम चतुर्वेदी

प्रकाशक

साहित्य भवन लिमिटेड, प्रयाग

प्रथमवार : मूल्य दो रुपया

मुद्रक : जगतनारायणलाल, हिन्दी-साहित्य प्रेस, प्रयाग।

परिचय

श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शीने गुजराती साहित्यमें कविताको छोड़कर शेष सभी प्रकारकी रचनाएँ की हैं। नाटक, उपन्यास, जीवन-चरित, निबन्ध और आलोचनाके क्षेत्र इनकी लेखनी से उर्वर हो चुके हैं। इनकी सर्वश्रेष्ठ कृतियोंमे वे उपन्यास और नाटक विशेष रूपसे उल्लेखनीय हैं जो इन्होंने "प्राचीन आर्योंकी वीरगाथा" मालामें लिखे हैं। उसी मालाकी दिव्य कलिका यह शंबरकन्या है।

अनन्त चतुर्दशी
सं० २००४

सीताराम चतुर्वेदी
भारतीय विद्याभवन,
चौपाटी रोड, बंबई ७

पूर्व पीठिका

आर्यावर्त्तके गौरवमय इतिहासका ब्राह्ममुहूर्त्त उस समय जाग रहा था। हैहयवंशी आर्योंका प्रतापी नेता महिष्मत उन दिनों अनूप देश (वर्त्तमान गुजरात) पर शासन कर रहा था। शुक्र और च्यवन भार्गवोंके वंशज, युद्ध-पुरोहितोंके अग्रणी ऋचीक ही राज पुरोहितका पद सुशोभित कर रहे थे।

महिष्मत और उसके दुर्दान्त जाति-बन्धुओंसे अपमानित होनेपर ऋचीक उन्हें शाप देकर संस्कृत आर्योंके देश सप्तसिन्धुकी ओर चले जाते हैं और वहाँ वीर भरतोंके राजा गाधिके पास पहुँचकर उनकी कन्या सत्यवतीसे विवाह कर लेते हैं।

संयोगसे जिस समय सत्यवतीके पुत्र जमदग्निका जन्म होता है उसी समय सत्यवतीकी माताकी कोखसे भरतोंके युवराज विश्वरथका भी जन्म होता है।

विश्वरथ और जमदग्नि अत्यन्त स्नेहसे अपना शैशव और बाल्यकाल पार कर जाते हैं और ज्यों-ज्यों वे बड़े होते जाते हैं त्यों-त्यों उनका स्नेह भी बढ़ता चलता है। जब वे सात वर्षके हुए तो वे परम ज्ञानी तथा विद्वान् भरद्वाज ऋषिकी सुन्दरी कन्या लोपामुद्रासे स्नेह करने लगे। अपना विवाह न करनेकी प्रतिज्ञा लेकर वह अपने पिताके क्रोधसे बचने के लिये ऋचीकके पास चली आई। अवस्थामें लोपामुद्रासे बहुत छोटे होते हुए भी विश्वरथ और जमदग्नि दोनोंने यह निश्चय किया कि हम विवाह करेंगे तो लोपामुद्रासे ही किन्तु जब उन्हें लोपामुद्राकी प्रतिज्ञाका समाचार मिला तो वे सन्न रह गए।

दोनों बालक शिक्षा-दीक्षाके लिये महर्षि अगस्त्यके आश्रममें भेज दिए जाते हैं जो उस समय तृत्सुराज दिवोदासके राजपुरोहित थे।

मार्गमें ही उन्हे अगस्त्यके छोटे भाई बशिष्ठ मिल जाते हैं। वहाँ पहुँचने पर उनका परिचय दिवोदासके कुटिल पुत्र सुदाससे हो जाता है जो सुन्दर, शुद्ध हृदय विश्वरथसे चिढ़कर उसे जलमे डुबा देनेका प्रयत्न करता है।

अगस्त्य ऋषिके आश्रममे पहुँचकर विश्वरथ सबका स्नेहपात्र बन जाता है जिनमे महर्षिकी छोटीसी कन्या रोहिणी और ऋषित्वकी कामना करनेवाला मूढ ऋक्ष भी है। अगस्त्य भी उसकी कुशाग्रबुद्धिसे प्रसन्न होकर उसपर कृपा करने लगते हैं। केवल सुदास ही उससे द्वेष करता था और सदा उसे नीचा दिखाने का प्रयत्न करता था और जब तृत्सुओंके राजा दिवोदासके सम्मानमे प्रदर्शित किए हुए रणकौशल-परीक्षणमे भी विश्वरथ सर्वश्रेष्ठ ठहराया गया तब तो सुदासके क्रोधका पार नहीं रहा।

दिवोदासने उन दिनों काले कलूटे दस्यु-राजा शबरको विध्वंस करनेका व्रत ले रक्खा था और अगस्त्य उसके पोषक थे क्योंकि दस्युओंके रहने से उन्हें आर्योंके आचार विचारमें बाधा पड़नेकी आशंका थी। वे उन युवा ऋषियोंके भी विरोधी थे जो दस्युओंको उन्नत करके आर्य बना लेना चाहते थे। इनमें सबसे अधिक आकर्षक और प्रधान थी लोपामुद्रा।

आर्यों और दस्युओंका युद्ध प्रारभ हो जाता है। एक दिन शंबर और उसके साथी आश्रममें चुपचाप घुस जाते हैं और विश्वरथ तथा ऋक्षको वहाँसे उड़ा ले जाते हैं। इन दोनोंको लेजाकर शम्बर अपने गढ़में रख देता है जिसकी रक्षाका अधिकार दस्युओंके देवता उग्रकालके पुजारी भैरवके हाथमें है। उसी गढ़में शम्बरका परिवार भी है और उनके साथ विश्वरथ बहुत हिलमिल जाता है यहाँ तक कि शम्बरकी पुत्री उग्रा तो विश्वरथसे प्रेमतक करने लगी और जब विश्वरथ उसका तिरस्कार करता है तो वह प्रेममत्त होकर रोती पीटती और आँसू बहाती है।

वहाँके भोले-भाले दस्युओंके स्नेहसे प्रभावित होकर विश्वरथके मनसे जाति-घृणाका भाव दूर हो जाता है और वह भी उनसे स्नेह करने लगता है। अत्त्र तो संयमके सब बन्धनही ढील देता है। मदिरा और मदिराची दोनों उसे प्राप्त होने लगती हैं किन्तु भैरवको यह सब काड अच्छा नहीं लगता और वह सशक होकर यह लीला देखता रहता है और समझता है कि इसका परिणाम होगा हमारा विनाश।

विश्वरथका स्नेहपूर्ण व्यवहार उग्राको और अधिक न रोक सका और विश्वरथ भी उग्राके प्रगाढ़ प्रेम पर न्यौछावर हो गया और उसे अपनी पत्नीके रूपमे उसने स्वीकार कर लिया।

इसके आगेकी कथा शम्बरकन्या नाटकमे प्रारम्भ होती है।

—सीताराम चतुर्वेदी

शम्बरकन्या

समय :	: ऋग्वेद काल
स्थल :	: दस्युओंके नेता शम्बरका गढ़
पात्र :	: आर्यों की प्रतापी भरत जातिका
विश्वरथ कौशिक :	जनपति, गाधिका पुत्र ।
उग्रा शाम्बरी :	: दस्युओंके नेता शम्बरकी लाड़ली पुत्री ।
ऋक्ष :	: तृत्सुकुलका आर्य, विश्वरथका सहाध्यायी ।
शम्बर :	: दस्यु जातियोंका नेता ।
तुग्र :	: शम्बरका नगर-रक्षक ।
भैरव :	: दस्युओंके देव उग्रकालका पुजारी, दस्युओंका वैद्य-तांत्रिक —आर्योंमे जो स्थान राज-पुरोहितका था, वही स्थान दस्युओंमें उसका था ।
लोपामुद्रा भारद्वाजी	: ऋषि भरद्वाजकी पुत्री और देवोंकी प्रिय स्त्री । ऋषि तथा मंत्रद्रष्टी ।
दासी :	: तुग्रकी स्त्री और उग्राकी धाय ।

अगस्त्य मैत्रावरुण	:	महर्षि, मित्रावरुण देवता के पुत्र, वशिष्ठके बडे भाई, विश्वरथ और खेलके पुरोहित।
ऋचीक भार्गव :	:	महाअथर्वण, काव्य जातिके भृगु, महर्षि विश्वरथके बहनोई।
प्रतर्दन :	:	विश्वरथका सेनापति।
दिवोदास अतिथिग्व	:	तृत्सुओंका जनपति, राजा।

अनुसंधान

विश्वरथ और ऋज्ञ दोनों शम्बरके गढ़मे वन्दी हो गए हैं। छूटनेकी आशा न होनेके कारण विश्वरथने उग्रा शाम्बरी के साथ गृह-संसार बसा लिया है।

दस्युओं और आर्योंके बीच विग्रह चल रहा है। गढ़मे प्रायः ऐसे समाचार आते रहते हैं कि अगस्त्य और भरतोंकी सेना हार रही है।

प्रथम अंक

प्रथम प्रवेश

[साँझ होने आई है। सूर्य कुछ-कुछ निस्तेज होने लगा है। दस्युओंके नेता शम्बरका गढ़। दाईं ओर नारियल और खजूरके पत्तोंकी खुली झोंपडी है। उस पर वृक्षकी छाया पड़ रही है। पीछे एक दो ऐसी ही अन्य झोंपड़ियोंका पिछवाडा दिखाई पड़ रहा है। बाईं ओर, बीचमें, आगेकी ओर एक वृक्ष है और उसके पीछे एक झोंपड़ीका पिछवाड़ा दिखाई पड़ रहा है। दूरसे ऐसा लगता है मानो इन झोंपड़ियोंके दोनों ओर पत्थरकी दिवाल है।

आगेवाले वृक्षके थालेपर विश्वरथ बैठा है। वह स्फटिक-सा श्वेत और देव जैसा सुन्दर है। वह मृगचर्म लपेटे हुए एक हाथ पर सिर रक्खे बैठा है। उसके मुख पर ग्लानि है। ऐसा जान पड़ता है कि उसके मुँहमें पानी भरा हुआ है। पीछेसे ई-ऊ-ई-ई-ई-ऊ की किलकारियाँ भरते और नृत्य करते हुए लोगों के पैरोंके घुँघुरुओंका शब्द जब बन्द हो जाता है, तभी परदा खुलता है।]

विश्वरथ

[धीरे धीरे रोने स्वरमें] मघवा! मघवा! आपने यह क्या ठान लिया है? [फिर किलकारियाँ और घुँघुरू और भी स्पष्ट सुनाई पड़ने लगते हैं।]

उग्रा

[प्रवेश करते हुए] कौशिक ! कौशिक ! चलो उठो। पिताजी तो कबके आ पहुँचे हैं। [विश्वरथको खिन्नवदन बैठा देखकर वह चौंककर खड़ी रह जाती है। उसके मुँहपर चिंता फैल जाती है, और वह दौड़ती हुई जाकर विश्वरथके कंधेपर हाथ रखकर खड़ी हो जाती है।] क्या कर रहे हो ? रो रहे हो ? सारा नगर आज उत्सवसे गूँज रहा है और तुम यहाँ बैठे इस प्रकार आँखे गीली कर रहे हो ? कौशिक—

विश्वरथ

[गीली आँखें उठाकर देखता है और दीनताके साथ बोलता है।]

उग्रा ! मैं किस मुँहसे हँसूँ ? आज सब लोग मेरे पितृ-तुल्य गुरुकी पराजय पर उत्सव मना रहे हैं। तुम्हारे पुरवासी जहाँ आज उल्लासमें मस्त हो रहे हैं वहाँ भरतोंमे रोना-चिल्लाना मचा हुआ होगा। तुम शाम्बरी ! जाओ हँसो, खेलो, नाचो, कूदो, आनन्द मनाओ।

उग्रा

तो क्या तुम नहीं चलोगे ? गाँव भरके स्त्री-पुरुष जहाँ पिताजीका स्वागत कर रहे हैं वहाँ भला हम लोग नहीं चलेंगे ?

विश्वरथ

मैं किसका स्वागत करनेके लिये चलूँ ? तुम्हारे कारावास की शृंखला जब मेरे लिये और भी दृढ़ होती जा रही हो उस समय मैं हँस कैसे सकता हूँ शाम्बरी ! तुम जाओ अकेली।

उग्रा

[खेदपूर्वक] तब तुम क्या करोगे ?

विश्वरथ

मै ? मै ऐसे स्थान पर चला जाऊँगा जहाँ मुझे कोई देख न पावे। तुम मुझे आज सिर पटक-पटक कर मर जानेके लिये छोड़ दो। मुझे आज मरना ही है। [थोडी देर दोनों चुप रहते हैं। विश्वरथ आँसू पोंछता है। शाम्बरी उसके माथेपर स्नेहसे हाथ फेरती है। रोने स्वर में] देव मघवा! मुझे युद्धक्षेत्रमें ही लड़ते लड़ते क्यों नही मर जाने देते ?

उग्रा

तो इसमे रोने की कौन-सी बात है? तुम कहो तो मैं भी न जाऊँ। किन्तु यदि पिता जी मुझे वहाँ नहीं देखेंगे तो उनका उत्साह मंद पड़ जायगा।

विश्वरथ

[सिर हिलाकर] क्यों ? तुम जाओ। आनन्द करो। तुम जब मेरा दुःख ही नहीं समझ सकती हो तो समभागिनी कैसे बन सकती हो ?

उग्रा

[दीन भावसे] कौशिक! बताओ यदि मेरे स्थान पर तुम्हारी कोई गौराङ्गी पत्नी होती तो वही क्या करती ? ऐसा कौन-सा उपाय निकालूँ कि तुम और पिता जी दोनों प्रसन्न हो सको!

विश्वरथ

[खेदपूर्वक] तुम यदि आर्या होती तो आज अपने पिताका सुख भूलनेमे ही अपना अहोभाग्य मानती। तुम्हारी नस-नस

मेरी नस-नस के साथ नृत्य करती होती। [निःश्वास छोड़कर] पर ये बातें तुम नहीं समझ सकती हो।

उग्रा

[जैसे हृदयपर आघात हुआ हो और उसीकी वेदनामें कह रही हो।] बताओ, मैं क्या करूँ कौशिक! मै क्या नहीं कर रही हूँ? तुम जो कहो मैं वही करने को तत्पर हूँ। इससे बढ़कर तुम्हे चाहिए क्या? और तुम इस प्रकार दुखी क्यों होते हो?

विश्वरथ

[खड़े होकर उग्राको स्नेहसे गले लगाकर] उग्रा! तुम्हारी भक्ति और सेवा निःसीम है। क्षमा करना मुझे। इतनी सब होने पर भी तुम राजपुत्री हो और मै बन्दी हूँ। तुम दस्युकन्या हो, मैं भरत हूँ। हम दोनोंका कोई मेल ही नहीं बैठता। तुम जाओ और मुझे अपने—

[ई-ई-ई-ऊ-ऊ की किलकारी, घुँघरू और ढोलक की ध्वनि सुनाई पड़ती है। ऋक्ष और दो दस्युकन्याओंका प्रवेश। ऋक्ष बहुत मोटा, बड़े पेट वाला, और लम्बे डील-डौल का आर्य है। उसके मुँहपर सयानपनका कोई चिह्न नहीं दिखाई पड़ता। उसका रंग गोरा है पर उसने दस्युओंके समान ही लँगोटी बाँध कर चारों ओरसे ताड़के पत्तोंका लँहगा-सा लटका कर पहन रक्खा है। उसने पैरोंमें घुँघरू बाँध रक्खे हैं, सिरपर मोरके पंख खोंस रक्खे हैं, हाथमें कड़े पहन रक्खे हैं और पीठ पर ढोलक बाँध रक्खी है। वह मदिरा के मदमें चूर है। उसके साथ जो कन्याएँ आई हैं सब शाम्बरी जैसी ही काली हैं पर वैसी रूपवती नहीं हैं। एक मोटी है और दूसरी लम्बी तथा पतली है। उन्होंने भी पैरोंमें घुँघरू और

पीठपर ढोल बाँध रक्खी है। तीनों नाचते हुए और ई - ई - ई - ऊ - ऊ करते हुए आ रहे हैं।]

ऋक्ष

[मदभरे स्वरमें] कौशिक! वयस्य! चलो। सारा गाँव तो यहाँ आ पहुँचा है। तुम यहाँ बैठे-बैठे क्या कर रहे हो?

[विश्वरथ उसे देख कर क्रोधित हो जाता है और भ्रूभंग करके ऋक्षका कान पकड़ता है। ऋक्ष 'ओ' करके छुड़ा लेता है और दूर जाकर खड़ा हो जाता है।]

विश्वरथ

तुझे क्या हो गया है ऋक्ष? तू क्या कर रहा है इसका भी तुझे कुछ ज्ञान है?

ऋक्ष

[कान सहलाता हुआ] गाधिपुत्र! जहाँ गान और तान हो वहीं मैं—

विश्वरथ

[दाँत पीसकर] अपने गुरुदेवकी पराजयपर उत्सव मना रहा है, यही न?

ऋक्ष

भरतश्रेष्ठ! पराजय में धैर्य बनाए रखना भी वीरका ही काम है। दुःखमें भी सुख मानना, यही तो तपस्वियोंका तप है।

विश्वरथ

ऋक्ष! तू तृत्सु और मैत्रावरुणके नामको लज्जित कर रहा है? ढीठ! तुझे तनिक भी लाज नहीं आती? यह कैसा मद है? कैसा वेश है? कैसा ढोल है? चल मेरे साथ! हम

शम्बर कन्या

लोग अपनी झोंपड़ीमे चलें। [उसका हाथ पकड़ कर खींचता है]

ऋक्ष

[हाथ छुड़ाकर] कौशिक! मुझमे भी जब आँसुओंकी नदियाँ बहानेकी शक्ति आ जायगी तब तुम्हारे साथ चला चलूँगा, तबतक तो ई-ई-ई-ऊ-ऊ (किलकारी करके नाचता कूदता है।) चलो। [दस्यु-कन्याओंके कन्धोंपर हाथ रखकर चला जाता है।]

विश्वरथ

देवाधिदेव वरुण! अब मुक्ति दो मुझे।

उग्रा

कौशिक! क्यों निःश्वास छोड़ रहे हो। मैं तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ! तुम्हारे हासके बिना मैं अन्धी हुई जा रही हूँ। चलो, जो बात तुम्हें नहीं अच्छी लगती उसकी मुझे भी चिन्ता नहीं है।

विश्वरथ

[भीगी आँखोंसे] शाम्बरी! तुम राजकन्या हो। एक वन्दी के लिये इतना कष्ट क्यों उठाना चाहती हो? न तो मैं तुम्हें अभी सुखी कर रहा हूँ न आगे कभी कर ही पाऊँगा।

उग्रा

[भीगी आँखोंसे] पर मैं तो केवल तुम्हारे ही चरणोंमे रहना चाहती हूँ। [आँसू पोंछती है।]

विश्वरथ

देव! अनार्योंमें यह सरलता कहाँसे ला भरी है? उठो

उग्रा ! रोओ मत। चलो उधर चलकर बैठें। चलो। [दोनों जाते हैं।]

[किलकारियाँ मच रही हैं, ढोलक बज रही है। शम्बर, तुम्र, ऋत्त और दो दस्यु आते हैं। शम्बर लम्बा चौडा, प्रचण्ड और वृद्ध दस्यु है। उसके सिरके बाल लम्बे और धवल हैं। उसकी बड़ी-बड़ी श्वेत मूँछे लटकी हुई हैं। उसकी बड़ी-बड़ी आँखोंमें वीरता भरी हुई है। वह रंगीन कच्छा मारे हुए है और पीछेकी ओर ताड़पत्रका लँहगा-सा पहने हुए है। उसके सिर पर, छाती पर और हाथमे लोहेके त्राण-खण्ड बँधे हुए हैं। वह बातें करता जाता है और उन त्राण-खंडोंको उतार-उतार कर दस्युओं को देता जाता है।

तुम्र भी वृद्ध और बलवान दस्यु है। कवचके अतिरिक्त उसने भी शम्बर जैसा ही वेश धारण कर रक्खा है और सिरपर मोरके पंख खोंस लिए हैं। उसकी कटिपर एक छोटी-सी तलवार लटकी हुई है। एक दस्युके हाथमें शम्बरका भाला, धनुष-बाण ढाल और तलवार है। दूसरा दस्यु शम्बरके उतारे हुए त्राण-खंड लेता जाता है। ऋत्त जैसा था उसी दशामें है। तुम्रके साथ बात करता हुआ शम्बर आता है।]

शम्बर

तुम्र ! अगस्त्यको हम लोगोने अच्छा छकाया। वह बाल-बाल बच गया, नहीं तो मैं उसे पकड ही ले आता !

[हाथसे ही गला ऐंठ डालनेका नाट्य करता है।]

दस्यु

[नेपथ्यमें] ई-ई-ई-ई-ऊ-ई-ई-ई-ई-ऊ-

शम्बर

पर उग्रा कहाँ चली गई ? यहाँ भी तो नहीं दिखाई देती।

तुम्र

[चिल्लाकर] उग्रा !

ऋक्ष

कौशिक के साथ घूम रही होगी।

शम्बर

कौशिक !

तुम्र

हाँ अन्नदाता ! यह तो हमीं लोगोंसे भूल हो गई थी। ऋक्ष यह है। छोटेका नाम कौशिक है, अथर्वणका साला। उग्राने उसीको वरण किया है।

शम्बर

अच्छा ! [खिलखिलाकर हँसते हुए] हः हः हः हः। यह भूल हो कैसे गई ?

ऋक्ष

दस्युओंके नाथ ! वह तो आज बैठा रो रहा है।

शम्बर

[खिलखिला कर हँसते हुए] सचमुच आजका दिन तो तुम्हारे रोनेका ही है। [ऋक्षसे] जाओ उसे बुला तो ले आओ। उसे भी अपने पराक्रम की कथा कह सुनाऊँ ![मूछोंपर ताव देता है।]

तुम्र

जाओ ऋक्ष ! कौशिक उधर बैठा होगा। [ऋक्ष जाता है।] अन्नदाता ! आप स्वस्थ तो हैं न ?

शम्बर

[गर्वसे] तुग्र ! उग्रकालने मेरी भुजाओंमे एक सहस्र पुरुषोंका बल भर दिया है। मुझे कुछ चोट अवश्य आई थी, पर घाव दो ही दिनमे भर गए। यहाँ सब लोग कैसे हैं ?

तुग्र

सब आनन्द से हैं। केवल उग्री बहुत अस्वस्थ हो गई थी।

शम्बर

अरे ! मेरी लाड़लीको क्या हो गया था ? अब कैसी है ?

तुग्र

अच्छी हो गई है।

शम्बर

अच्छा ! जानता होता तो भैरवको भिजवा देता।

तुग्र

कौशिकने ही अपने मंत्रसे उसे अच्छा कर दिया, नहीं तो चल ही दी थी। [पैरोंकी आहट सुनाई पड़ती है।]

शम्बर

आ गई मेरी उग्री। उग्री ! [दौड़ती हुई उग्रा आकर चिपट जाती है। शम्बर उसे स्नेहसे भेंट करके गालसे चिपका लेता है।] उग्री ! मेरी उग्री ! कहाँ थी ? [विश्वरथ धीरे-धीरे आता है और आदरसे खड़ा हो जाता है।] कहो कौशिक ! कैसे हो ? तुम अथर्वण ऋचीकके साले हो, यह तुमने अबतक क्यों नहीं बतलाया ? यह तो मुझे आज तुग्रने बताया है।

विश्वरथ

आपने पूछा ही कब था ? यदि आप ऋक्षको ही कौशिक मान बैठें तो मैं क्या कर सकता हूँ।

शम्बर

[उग्राकी पीठ थपथपाकर] उग्री ! तू बड़ी पक्की निकली ! तूने कौशिकको ठीक पहचाना !

तुग्र

[हँसकर] इन बातोंमे लड़कियाँ बड़ी चतुर होती हैं।

शम्बर

[उग्रासे] और इस वेशमे कैसे हो ? न तो पैरोंमें घुँघुरू हैं, न साथमे ढोलक है। क्या चित्त ठीक नहीं है ?

उग्रा

ठीक ही है बापू ! कौशिकका मन कुछ भारी हो रहा था, उन्हींके पास बैठी थी।

शम्बर

क्यों न भारी होगा ! कौशिक ! तेरे गुरुको मैंने भरपेट छकाया है। बस पकड़में आते-आते बच गए। अब मैं गला दबोच कर उससे अपने सब दस्यु लौटा लूँगा। [हँसकर] तुम्हारे कितने ही आर्योंको मैं पकड़ लाया हूँ, जानते हो ?

विश्वरथ

[खिन्न स्वरमें] हाँ, अभी दैव हमारे विपरीत हैं। क्या सब बन्दियोंको यहीं ले आए हैं ?

शम्बर

[हँसकर] क्यों, यहाँ अकेले अच्छा नहीं लगता ? मैंने सब को अलग-अलग नगरोंमें भेज दिया है। हमारे दस्युओंसे तुम लोग जैसी सेवा लेते हो वैसी ही मैं भी तुम लोगोंसे लूँगा।

तुम्हारे लिये भी एक वन्दी ले आया हूँ। उसकी सेवा तुम्हें करनी होगी।

विश्वरथ

[गर्वके साथ] ऐसा कौन-सा वन्दी लाए हो?

शम्बर

तुग्र! वह भी कौशिकके पास वाली झोंपड़ीमें ही रहेगा। [विश्वरथसे हँसकर] कौन वन्दी है? ठहरो, अभी आया जाता है! उग्री? [उग्राको पास खींचकर] हँसती क्यों नहीं है? ऐसी क्यों हो गई है?

उग्रा

[नीचे देखती हुई] नहीं, मुझे तो कुछ भी नहीं हुआ। मेरे भाई कहाँ हैं?

शम्बर

भेद बेचारा तो मारा गया। और सब अलग-अलग नगरों में हैं।

उग्रा

[खेदपूर्वक] मेरा भेद बेचारा उग्रकालकी शरणमें चला गया। ओः! मुझे ऐसा लग ही रहा था कि कुछ न कुछ अवश्य होने वाला है। [आँसू पोंछती है।]

शम्बर

रोओ मत। वह निरर्थक ही उग्रकालके पास नहीं गया है; वह कितने ही आर्यों के सिर अपने साथ लेकर उन्हें भोग चढ़ानेके लिये गया है। चुप हो जा उग्री! कौन! भैरव आया है क्या?

भैरव

[नेपथ्यमें] ई-ई-ई-ऊ

उग्रा

हाँ, ऐसा ही जान पडता है।

[भैरव आता है। वह लगभग पच्चीस बरसका लम्बा दुबला दस्यु है। उसने दस्युओं-जैसा वेश बना रक्खा है। उसने कपाल पर बालोंमें और शरीरपर भस्म रमा रक्खी है, आँखों में सिन्दूर आंजा है, हाथमें रक्तरञ्जित त्रिशूल ले रक्खा है और पैरोंमे घुँघरू पहन रक्खे हैं।]

शम्बर

लोपा कहाँ है भैरव ?

विश्वरथ

[चोंककर] लोपा ?

भैरव

उसके हाथोंका बधन खोला जा रहा है। वह अभी अभी यहाँ लाई जाने वाली है।

शम्बर

[भ्रूभंग करके] उसके हाथ क्यों बाँधे गए हैं ?

भैरव

[दुष्टतापूर्वक हँसकर] मैं अपने सिर क्यों विपत्ति लेने लगा ?

शम्बर

हाथ बाँधनेके लिये तो रोक दिया गया था न ?

भैरव

मुझे उग्रकालकी आज्ञा हुई थी। ऐसा सुन्दर वन्दी आज

तक कभी उनकी शरणमे नहीं आया।

शम्बर

[आगे बढ़ता हुआ] आओ, आओ! लोपामुद्रा!

[लोपामुद्रा आती है। वह भव्य स्त्री है, लम्बी और सुन्दर, कोई तीस बरसकी लगती है। सूर्यके प्रकाशमें उसके स्फटिक से मुखपर पाटलकी झलक आ रही है। उसकी आँखोंमें मोहक तेज है। उसने उस युगकी आर्य स्त्रियोंकी वेष-भूषा धारण कर रक्खी है। नीचे एक नीवीयुक्त अधोवस्त्र अथवा एक हलका ऊँचा सा लँहगा पहन रक्खा है और ऊपर मोटे सूत का ओढ़ना। कंधे पर ऊनी उत्तरीय है। उसके बाल चार लटोंमें गुँथे हुए हैं। उसके गलेमें रुद्राक्षकी माला है। हाथों में कमंडलु है और पैरोंमें खड़ाऊँ है।] मेरा नगर पवित्र करो।

लोपामुद्रा

[मोहभरी हँसी हँसते हुए] क्यों शम्बर! अब तो तुम्हारी इच्छा पूरी हो गई? [शम्बर हर्षसे हँसता है।]

विश्वरथ

[साष्टांग दण्डवत करके] भगवती! प्रणाम!

लोपामुद्रा

[हाथ बढ़ाकर] पुत्रक! सौ शरद तक जिओ। [पहचान कर] कौन विश्वरथ! भरतश्रेष्ठ! तू भी यहाँ है? [दोनों हाथोंसे भेंट कर, उसे उठाकर उसका माथा सूँघती है] वत्स! कितने दिनोंसे यहाँ हो?

विश्वरथ

सात महीने हो गए भगवती। आप कैसे वन्दी हो गईं?

लोपामुद्रा

मैं राजा पुरुकुत्सके यहाँसे शतद्रुके जलमार्गसे नावमें चली जा रही थी। इतनेमें ही मैंने सुना कि मुनि अगस्त्यको चोट लगी है। मैं उन्हें देखनेको उतरी कि शम्बरने आकर मुझे वहीं वन्दी बना लिया। [शम्बरसे] क्यों तुम्हारा वैर पूरा हो गया?

शम्बर

[गर्वित होकर] वैर? मैं तुम्हें वैरके कारण पकड़ कर नहीं लाया हूँ। बहुत वर्षोंसे तुम्हें देखनेको जी कर रहा था। इसी से—

लोपामुद्रा

[हँसकर] और साथ ही आर्योंको भी यह दिखा देना चाहते थे कि शम्बर जिसे चाहे उसे वन्दी कर सकता है। क्यों? ठीक है न कौशिक?

उग्रा

[विश्वरथका हाथ पकड़ कर ले जाते हुए] चलो, हम लोग चलें।

विश्वरथ

[उग्रासे] नहीं!

शम्बर

[नम्रतापूर्वक] जबसे तुमने मेरे प्राण बचाए तभीसे मन चाह रहा था कि एक बार तुम्हें यहाँ ले आऊँ।

लोपामुद्रा

[खेदपूर्वक] किन्तु दस्युराज! मुझे पकड़कर तुमने बहुत बड़ा पाप किया है। पिछले सत्तर वर्षोंमें तुमने देवोंको इतना

कुपित कभी नहीं किया था जितना आज कर दिया है।

भैरव

[भयानक रूपसे हँसकर] नहीं उग्रकाल प्रसन्न हैं।

लोपामुद्रा

[उसकी ओर पीठ फेरकर] शम्बर! देवता तुम्हें क्षमा नहीं करेंगे।

शम्बर

लोपामुद्रा! मुझे उग्रकालकी शपथ है यदि मैं तुम्हें किसी प्रकारका कष्ट दूँ।

लोपामुद्रा

मुझे अपने कष्टका चिन्ता नहीं है। मुझे तो इसी बातकी चिन्ता हो रही है कि तुम्हारी क्या गति होगी!

भैरव

जब उग्रकालकी कृपा है तब किसकी चिन्ता ई-ई-ई-ई ऊ-ऊ

शम्बर

सच बात है। जबतक मेरे पशुपति मेरे साथ हैं तबतक मेरा कोई क्या बिगाड़ सकता है? और फिर मैंने ऐसा पाप ही कौन-सा किया है कि तुम्हारे या मेरे देवता रूठ जायँ?

विश्वरथ

[क्रोधसे] दस्युपति! देवोंके प्यारे भरद्वाजकी पुत्रीका अपमान करके किसीका कल्याण नहीं हो सका है। उस अपमानको आज देवता कैसे सहन कर लेंगे?

लोपामुद्रा

[हँसकर] मेरी कामना है कि इन्द्र तुम्हारा कल्याण करें। हाँ, कौशिक! महाअथर्वण अभी कुछ दिनों पहले ही मिले थे।

उग्रा

[विश्वरथसे] चलो न। [विश्वरथ सुनता ही नहीं है।]

लोपामुद्रा

[हँसकर] कौशिक ! वह कन्या तुम्हें बुला रही है।

[विश्वरथ दुखी होकर खड़ा रह जाता है।]

शम्बर

यह मेरी कन्या उग्री है। इसने विश्वरथको अपने वरके रूप मे ग्रहण किया है।

लोपामुद्रा

अच्छा ! कन्याके लिये ससुराल तो तुमने बहुत अच्छी खोजी है शम्बर ! सप्तसिन्धुमें विश्वरथके जोड़का कोई दूसरा पुरुष नहीं मिलेगा। [उग्रासे] यहाँ आओ बहन।

[उग्रा क्रोध से देखती है पर पास नहीं आती।]

शम्बर

उग्री ! पास आकर पैरों पड़ो। [उग्रा क्रोध से, नीचे देखती हुई पास आकर लोपामुद्राके पैर छूती है। लोपामुद्रा उसे उठाती है।]

लोपामुद्रा

बहन ! विश्वरथके योग्य बनो। क्यों, बोलती क्यों नहीं हो ?

उग्रा

[क्रोधसे] आप मेरे विश्वरथके साथ ऐसे क्यों बोलती हैं ?

[सब लोग हँस पड़ते हैं]

लोपामुद्रा

[हँसती है। उसका हास्य तरंगोंके समान फैल जाता है।] क्या इसीसे इतनी रूठ गई हो? [हँसकर] जानती हो? तुम्हारा विश्वरथ जब चार अंगुलका था तभी मेरे पीछे पागल हो गया था। [विश्वरथसे] स्मरण है न? भगवती सरस्वतीके तीर पर!

वश्वरथ

[वेदनासे आँखें उठाकर] स्मरण है! उस दिन के स्वप्नसे मैं अभी तक जागा नहीं हूँ। किन्तु आज उसका स्मरण न दिलाओ। इन दस्युराजने आज मुझे मनुष्यसे पशु बना छोड़ा है।

शम्बर

[हँसकर] पशु! यहाँ तुम्हे किस बात की कमी है भाई! एक बची थी मेरी उग्री, वह भी तुमने ले ली? [उग्राकी पीठ पर हाथ रखता है।]

वश्वरथ

हाँ, मैंने खाया है, पिया है, नींद ली है। शम्बरीने भी मुझे बाँध लिया है। सब ठीक ही है। किन्तु [कटुतासे] मैं हूँ तो बाड़ेमें घिरे हुए पशु के समान ही। अपने भरतोंके बिना......मै तो मरा जा रहा हूँ। और तुमने मेरा यह भी अधिकार छीन लिया कि अपने देवोंकी आज्ञा पालन करके मैं रणमे वीरगति पा सकूँ।

शम्बर

[हँसकर] विचित्र बालक है। है न उग्री? तुझे यह अच्छा कैसे लग गया?

लोपामुद्रा

[प्रशंसामुग्ध होकर] भरतोंकी प्रतापी वाग्देवी इसके मुखमे बसी हुई है।

भैरव

[कठोर होकर] दस्युराज। भोगका समय हो चला है। हमें उग्रकालके मन्दिर पहुँचना चाहिए।

शम्बर

हाँ, विश्वरथ! लोपामुद्रा तुम्हारे साथ रहेगी। अभी तुम्र यहाँ सारी व्यवस्था करा देगा!

भैरव

दस्युराज! इस स्त्रीको उग्रकालके मन्दिरमे ही ले चलो न!

लोपामुद्रा

[दृढ़ता-पूर्वक] मैं यहाँ विश्वरथके ही साथ रहूँगी। [विश्वरथके कन्धेपर हाथ रखकर] चलो कौशिक!

विश्वरथ

जैसी भगवतीकी आज्ञा।

भैरव

[आगे आकर] मैं भी आता हूँ और सारी व्यवस्था करा देता हूँ!

विश्वरथ

[कठोरता पूर्वक] जैसी इच्छा। पधारो भगवती!

[लोपामुद्रा विश्वरथके कन्धे पर हाथ रखकर चली जाती है। उनके पीछे भैरव जाता है। खिन्नवदना खड़ी हुई उग्राका मुँह देखकर शम्बर उसकी ठोढ़ी ऊपर उठाता है]

शम्बर

बेटी! इतनी रुष्ट क्यों हो गई? [उग्रा मुँह बिचकाकर दूर हट जाती है।].

उग्रा

पिताजी! इस गौरांगीको आप यहाँ लेते क्यों आए?

शम्बर

क्यों, तुझे नहीं अच्छी लगती? हम लोगोंपर यह बड़ी ममता रखती है।

उग्रा

[पगली-सी, मानो दम घुट रहा हो इस प्रकार गले पर हाथ रखकर] ममता! पिताजी! पिताजी। आपने मेरी हत्या कर डाली!

शम्बर

[आगे बढ़कर उससे भेंटता है] क्यों! क्यों! यह क्या कह रही है?

उग्रा

इसने मेरे कौशिकको छीन लिया है। [आँसू पोंछती है]

शम्बर

पगली हुई है? मेरी उग्रीको कौन छेड़ सकता है? भला देखूँ तो—चल, चुप हो जा।

उग्रा

यह तो मैं जानती हूँ—

[भैरव लौटकर आता है।]

भैरव

[क्रोधसे] दस्युनाथ! उस छोकरेको आपने बहुत सिर चढ़ा रक्खा है, समझे!

शम्बर

विश्वरथको ?

उग्रा

[अभिमानपूर्वक] क्यों ? क्या हो गया ?

भैरव

[क्रोधपूर्वक] जो उसके मनमे आता है वही कहता है और वही करता है।

उग्रा

[सभ्रम-पूर्वक] क्यों नहीं करेगा ?

भैरव

वह इस प्रकार बाते कर रहा है मानो वह लोपा उसीकी हो ? और आप भी, उग्रकालके वन्दियोंको जैसा वे चाहें वैसा मनमाना करने देते हैं।

शम्बर

भैरव ! तू बालकका बालक ही रह गया। लोपामुद्रा तो आर्योंके देवकी पुत्री है।

भैरव

[अधीरता-पूर्वक] किन्तु उसे पकड़कर तो हमीं लोग लाए हैं न ! उसे मेरी आँखोंके आगे रक्खा जाना चाहिए।

उग्रा

[गर्वपूर्वक] तो तुम उसे अपने ही यहाँ ले जाकर क्यों नहीं रखते ?

भैरव

मैं तो ले ही जाने वाला था, किन्तु दस्युराजने बीचमे कुछ और ही कर डाला।

शम्बर

तुम तो ले ही जानेवाले थे! [गम्भीरतापूर्वक] भैरव! मैं तुम्हारे दादाके समान हूँ, समझे? उस कन्याको मैं पकड़ अवश्य लाया हूँ, किन्तु मेरे लिये जैसी उग्री है वैसी ही वह भी है।

उग्रा

[तानेसे] ओः हो! आपके मनमे भी उसके लिये इतना आदर है क्या?

शम्बर

हाँ! मेरे मनमें उसके लिये बड़ा आदर है। उसने मेरी सेवा न की होती तो आज मैं जीवित न होता। तू नहीं जानती? मैं जब जंगलमे अकेला घायल होकर पड़ा था तब वह मुझे अथर्वणके आश्रममे ले गई, और मुझे जीवन दिया। उसके स्थानपर कोई दूसरा गौरांग होता तो अपने कट्टर बैरी शम्बरको वहीं ढेर कर देता। यह न भूलना भैरव! कि वह मेरी बेटी है।

भैरव

किन्तु वह विश्वरथ?

उग्रा

[शम्बरकी बातका जोड़ बैठाते हुए] यह न भूलना कि वह मेरा पति है।

शम्बर

[दोनोंके कन्धे थामकर] और तुम दोनों भी यह न भूल जाना कि वे दोनों मेरे अतिथि हैं।

भैरव

[सिर हिलाकर] किन्तु दस्युराज ! कौन जानता है, कल उग्रकाल दोनोको स्मरण कर ले तो !

शम्बर

[चौककर] तो !

उग्रा

फीकी पड़कर] ओः !

[परदा गिरता है और तुरन्त उठ जाता है ।]

प्रथम अंक

द्वितीय प्रवेश

[स्थान वही है। रात हो गई है। कुछ दूरपर वेदी बनाकर अग्नि स्थापित की गई है। उसमेंसे निकलती हुई लपटोंका तेज दिखाई पड़ रहा है। उसके दाईं ओर पास ही लोपामुद्रा घुटनोंके बल बैठी अग्निकी ओर देख रही है। रह रह कर वह ऋचकी ओर भी देखती जाती है। अभी उसने शाल नहीं ओढ़ा है और सिर परकी लटें जटाकी भाँति लपेट ली हैं। पास ही उसका कमण्डलु पड़ा है। दाईं ओर थोड़ी दूरपर हरिण और सिंहके चर्मका एक बिछौना बिछा है। बाईं ओर वृक्षके थाले-के पास लोपामुद्राकी ओर आँखें फाड़कर देखता हुआ ऋच भूमिपर बैठा है।]

ऋक्ष

[गहरा निःश्वास छोड़कर] मै कितना गिर गया हूँ !

लोपामुद्रा

[ऊपर देखकर] किन्तु तुम अगस्त्यके शिष्य जब इतने नीचे उतरोगे तो आगे न जाने क्या गति होगी।

ऋच

भगवती ! [हाथ जोड़कर] मैं सत्य कहता हूँ। मैं जब नन्हाँ-सा बालक था तब ऐसा नहीं था। उस समय तो स्त्री और

सुराके नामसे मै दूर भागता था। किन्तु दुष्ट असुरकी यह भूमि ही पापमयी है। क्षमा करना—

लोपामुद्रा

ऋक्ष! तुम्हारा हृदय ही दुर्बल है।

ऋक्ष

[बक्ष तानकर] भगवती भारद्वाजी! यह हृदय कभी वज्र जैसा कठिन भी था। पर न जाने इसे क्या हो गया है कि जहाँ मैने इन काली नकटियोको देखा नहीं कि मेरा हृदय हिम के समान पिघल कर पानी पानी हुआ नहीं। [रोने स्वरमें] मैं अत्यन्त पापी हो गया हूँ—भ्रष्ट हो गया हूँ।

लोपामुद्रा

[हँसकर] किन्तु यह तो तुम्हारे ही हाथकी बात है। क्या तुम इतना भी संयम नहीं रख सकते? [उठकर पास आकर बाईं ओर वृक्षके थालेपर बैठती है। ऋक्ष ज्योंका त्यों बैठा रहता है, केवल अपने पैरोंकी पलथी बदल कर, एक ओरसे दूसरी ओरको मुँह फेर लेता है।]

ऋक्ष

[मुट्ठियोंसे आँसू पोंछते हुए] नहीं भगवती! सब कुछ कर सकता हूँ किन्तु संयम नहीं रख सकता। देवोंने मेरे विरुद्ध षड्यन्त्र रच रक्खा है। उनमेंसे कोई भी मेरी प्रार्थना नहीं सुनना चाहते। तुम्हीं बताओ मैं क्या करूँ? जितने ही बलसे मैं प्रार्थना करता हूँ उतने ही वेगसे चित्त चञ्चल हो जाता है। मैं अनार्य हो गया हूँ।

[लोपामुद्राकी ओर दैन्य भावसे देखता हुआ आँसू टपकाता है।]

लोपामुद्रा

किन्तु यह सब कहने भरसे क्या होता है ? तुम अपने आप ही अपना उद्धार क्यों नहीं करते !

ऋक्ष

किन्तु भगवती ! भगवती ! [सिसकियाँ भरता हुआ] मैं वास्तवमें इतना बुरा नही हूँ। मै विश्वास दिलाता हूँ। [एकाएक हँस देता है।] देवोंने ही आपको यहाँ भेजा है। आपके आते ही मेरे हृदयका भयकर सकल्प धू धू करके जल उठा है। [वृक्षके पीछे, लोपामुद्राकी पीठकी ओर दो दस्यु-कन्याएँ आकर हाथसे संकेत करके ऋक्षको बुलाती हैं] दुष्ट नकटियो ! भाग जाओ यहाँसे ! [पीछे खड़े हुओंको देखनेके लिये लोपामुद्रा मुड़कर देखती है कि इतनेमें ही दस्युकन्याएँ वृक्षकी ओटमें जा छिपती हैं।]

ऋक्ष

[ससंभ्रम] कोई नही है। कोई नहीं है। न जाने कहाँसे नित्य नई-नई आ टपकती हैं और मेरा जी मसल डालती हैं। [दस्यु कन्याएँ फिर निकलकर चुपकेसे बुलाती हैं।] भागो भागो नकटियो ! भाग जाओ ! [लोपामुद्रा फिर देखनेके लिये मुड़ती है और कन्याएँ फिर छिप जाती हैं।] नहीं, कोई नहीं है। किन्तु मैं इन नकटोंकी जाति भरसे नाता तोड़ लेता हूँ। इन्हें तिलाजलि दे देता हूँ। मै बड़ा पापो हूँ भगवती ! बहुत बड़ा पापी हूँ।

लोपामुद्रा

किन्तु भाई। यह सब कहने भरसे कुछ लाभ नहीं है। मैं तो जबसे तुम्हें देख रही हूँ केवल मदिरामें ही मतवाला देख रही हूँ।

ऋक्ष

[रोने स्वरमें] भगवती ! मुझे भी यह बहुत बुरा लगता है। मैं कौन हूँ ? मै तृत्सु अगस्त्यका शिष्य – इस प्रकार सुरा पीकर पड़ा रहता हूँ ? धिक्कार है ऋक्ष ? तुझे धिक्कार है ! [सिसकियाँ भरते हुए] पर मै क्या करूँ ?

[थोड़ी थोडी दूरपर दस्यु कन्याएँ वृक्षके पीछेसे झाँक-झाँककर आँखसे संकेत करती है। जहाँतक बनता है ऋक्ष भी उन्हे चले जानेका संकेत करता है। और लोपामुद्रा कभी कभी पीछे फिरकर देख लेती है।]

लोपामुद्रा

यह 'क्या करूँ, क्या करूँ" क्या होता है ? बस सुरा पीना बन्द कर दो। तुम्हारे जितनी सुरा तो ये असुर भी नहीं पीते।

ऋक्ष

दया करिए [रोता है।] मै हृदयसे भला हूँ। पर यह असुरका गढ़—ये काली नकटी स्त्रियाँ—यह कारावास—देख-देख कर मेरा जी घबरा उठता है। और मेरा श्वास रुकने लगता है। मैं दुखी हो जाता हूँ। मैं अगस्त्यका प्रिय शिष्य और सुरा पीकर अपनी व्याकुलता शांत करूँ ? क्या दशा हो गई है ऋक्ष ? तेरी यह दशा ? [आकाशकी ओर देखता रह जाता है।]

लोपामुद्रा

किन्तु अब तुम मुझे वचन दो।—

ऋक्ष

क्या—?

लोपामुद्रा

यही कि सुरा का स्पर्श नहीं करोगे? दस्यु-कन्याएँ ऋक्षको बुलाती हैं।]

ऋक्ष

[दस्यु कन्यासे] मैं आता हूँ [लोपामुद्रासे] अरे—ऐं—हाँ—क्या कहा मैंने? मैं वचन देता हूँ—लो वचन—मैं इस हाथसे सुराका स्पर्श नहीं करूँगा। दुर्दमके पुत्र ऋक्षका यह वचन है।

[उठनेको होता है।] मै दुष्ट हूँ—पापी हूँ, पर वचनका सदा पालन करता हूँ। मेरी, अगस्त्यके शिष्यकी, क्या दशा हो गई है? भगवती! अच्छा हुआ कि आप आ गईं और मेरा उद्धार हो गया। आपकी तेजभरी आँखोंने मेरा हृदय कुरेद कर उसमेंसे शुद्ध सकल्पका निर्मल झरना बहा दिया है। [पैरों पड़ता है।] आजसे मैं आपका शिष्य हूँ, पुत्र हूँ—कभी भी सुराको हाथ नही लगाऊँगा। [दस्युकन्यासे खड़े रहनेका संकेत करता है।] आज्ञा दीजिए। मैं अपनी झोपड़ीमें जाकर पश्चात्ताप करूँगा।

लोपामुद्रा

हाँ, हाँ, जाओ। पर अभी विश्वरथ क्यों नहीं आया?

ऋक्ष

वह तो इन कालोंकी नाकका बाल हो गया है। जब भी कोई बीमार पड़ जाता है कि वह अश्विनोंका आवाहन कर लेता है। [तिरस्कारपूर्वक] पर इन नकटोंके लिये देवकी आराधना ही क्यों की जाय?

[जानेके लिये अधीर होता है ।]

लोपामुद्रा

ऋक्ष ! जीव मात्र ही वरुण देवके हैं। उन्हीके सुखके लिये देवोंका आराधन किया जाता है।

ऋक्ष

पर भगवती ! गुरुदेव तो स्पष्ट कहा करते थे कि इन कालोंको जहाँ देखो वहीं मार डालो।

लोपामुद्रा

[खड़ी होकर] तो तुम्हारी गुरु अभी समझे नहीं हैं ऋक्ष ! रंग और रूप भिन्न होनेसे मनुष्य पशु नहीं हो जाता।

ऋक्ष

[जैसे समझ गया हो] मैं भी तो यही करता हूँ कि रंग रूप भिन्न भिन्न होनेपर भी मनुष्य मनुष्य ही रहता है। सचमुच हाँ ! अब समझमें आ गया। इसीसे तो इन कलूटियोंको देखते ही मेरा जी ललच उठता है।

[सिर हिलाता हुआ जाता है ।]

लोपामुद्रा

[घुटनोंके बल बैठकर अग्निमें समिधा डालती है। [धीमे स्वरमें] पशु बनकर आर्यत्वको लज्जित कर रहा है। किन्तु दस्युओंके घरमें और होगा ही क्या ? कौशिककी भी क्या दशा हो गई है ?

[हाथ जोड़कर ऊपर दृष्टि उठाकर प्रार्थना करती है ।] इंद्र ! मघवा ! शतमन्यु ! सहायता करो और आर्योंको विजय दो।

[खड़ी होकर बाल सँवारती है ।] अभीतक विश्वरथ क्यों नहीं आया ? चलूँ, कपड़े धो डालूँ। [जाती है, उग्रा आती है ।]

उग्रा

[चारों ओर देखकर] कहाँ गई ? नहीं [वृक्षके थालेके पास खड़ी होकर अक्षत छोड़कर धीरे से कहती है।] नाग पिताजी ! यह गौरांगी बड़ी बुरी है। मेरे मणिधर पिता ! यह मेरे विश्वरथको उड़ा ले जाने आई है। इसे दाँत गड़ाकर काटना। इसकी फूटी आँखोंमे फूले डाल देना। इसके उजले रगको काला कर देना पिताजी !

[विश्वरथ पैर बढ़ाए हुए पीछेसे आता है और चौकता है।]

विश्वरथ

शाम्बरी ! तुम कहाँ से आ गई ? क्या कर रही हो ? भगवती कहाँ चली गई ?

उग्रा

[दयाजनक भाव से।] मैं तुमसे मिलने आई हूँ।

विश्वरथ

अभी ? अभी तो देर है।

उग्रा

[व्यथापूर्वक देखती हुई] क्यों, मैं अच्छी नहीं लगती हूँ ?

विश्वरथ

[अधीरतापूर्वक।] पगली ! सारे दिन यही बात क्या पूछती रहती हो ?

उग्रा

[डरते डरते] मेरे हृदयमें हूक सी उठ रही है। मुझे लगा जैसे तुम चले गए हो।

विश्वरथ

[ग्लानिसे भरकर।] जीवित रहा तो किसी दिन अवश्य

चला जाऊँगा। क्या तुम जीवन भर मुझे इसी प्रकार पिंजड़ेमें बद रखना चाहती हो ?

उग्रा

[दोनों हाथ जोड़ कर।] मुझे छोड़कर चले जाओगे ?

[विश्वरथ पास आकर उसकी पीठपर हाथ फेरता है।]

विश्वरथ

नहीं छोड़ जाऊँगा, नहीं छोड़ जाऊँगा। कितनी बार कहूँ ? बात बातमे यह क्या रोने लगती हो ?

उग्रा

[विश्वरथकी छातीपर सिर रखकर।] तुम मुझे अवश्य छोड़ कर चले जाओगे।

[विश्वरथ घबराकर चारों ओर देखता है।]

विश्वरथ

यह तूने कैसे जान लिया पगली ?

उग्रा

मुझे निश्चय हो गया है। तुम अभीतक उदास रहते थे। पर जबसे यह गौरांगी आई है, तभीसे तुम्हारी आँखें खुल गई हैं।

विश्वरथ

हाँ उग्रा ! जबसे भगवती आई हैं तब से ऐसा लगता है मानो मैं अपने घर मे ही हूँ।

उग्रा

[रोकर] मैं जानती हूँ—समझती हूँ। यह गौरांगी तुम्हें उड़ा ले जानेवाली है।

तुम्हें क्या हो रहा है, मैं सब समझती हूँ। [रोती है]

विश्वरथ

मुझे हर्ष हो तो इसमे चौंकनेकी क्या बात है ? उनके चरण छूते ही मेरे इस कारावासमे भी अगस्त्य और अथर्वणके आश्रमका तेज फैल गया है। मेरी नस नस इसप्रकार नाच रही है मानो मैंने सोमपान कर लिया हो या वरुणदेव मेरे हृदयमें आ बसे हों। [झिझक कर] क्यों ऐसी पागलपनकी बाते मुँहसे निकालती हो। [गले लगाता है और उग्रा उसकी छातीपर सिर रख कर सिसकियाँ भरती है।] जाओ, जाओ ! आधी रातको मेरी झोपड़ीमे आना। मुझे आज यहाँ कुछ अबेर हो जायगी।

उग्रा

[अलग होकर आँसू पोंछती है।] जाऊँ ?

[पीछे से कुछ खड़खड़ाहट सुनाई पड़ती है।]

विश्वरथ

[आज्ञा देकर] हाँ, जाओ। मुझे भगवतीके साथ बातें करनी हैं।

उग्रा

[निःश्वास छोड़कर।] जैसी आज्ञा। [नीचे देखती हुई खिन्न बदन होकर चली जाती है।]

विश्वरथ

यह भी कोई स्त्री है ? [विचार करते हुए] किन्तु मैं भी तो पागल हो चला हूँ।... ..इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है। शाम्बरीका नगर मानो लुप्त हो गया है।............ ३३

२

अथर्वणके आश्रमके तरुवर प्रभातके मद पवनमे झूम रहे हैं। [मानो स्वप्न देख रहा हो।] देवी सरस्वती बही जा रही हैं ....ये खड़े हैं—प्रफुल्ल नयनोंसे गम्भीर मधुर स्वरमे देवका आराधन करते हुए। सारा उपवन उनकी दैवी छटासे कम्पायमान हो रहा है। मै मानो आठ वर्षका हूँ।......यमदग्निका हाथ पकड़े हुए, दाँतो तले उँगली दबाए हुए, आँखें फाड़ फाड़कर उन्हे देख रहा हूँ। [देखता रह जाता है।] आज, वह स्मरण नहीं है।...दर्शन है। [रुकता है।] वे आ रहे हैं—[धीरे-धीरे मानो चित्र खड़ा कर रहा हो।]......नीचे झुकते हैं......चुम्बन करते हैं—[गाल सहलाकर चौक उठता है।] ....सारे जगत्का सार इस स्पर्शमे समाया हुआ है।......आज भी उसकी आह्लादकता वैसी ही जल रही है। [लोपामुद्रा पीछेसे आती है, खड़ी रहती है और हँसती है।]

लोपामुद्रा

क्या जल रही है?

विश्वरथ

[चौंककर, मुड़कर लजा जाता है।] जल रही है? क्या? ......कुछ नहीं......

लोपामुद्रा

[हँसकर] किससे बातें कर रहे थे?

विश्वरथ

अभी यहाँ उग्रा आई थी।

लोपामुद्रा

कौशिक! वह बालिका तुम्हारे पीछे पागल हो गई है।

विश्वरथ

[ऊबकर] भगवती ! भगवती ! मैं क्या करूँ ? यह लड़की इस कारावासमे भी मुझे चैन नहीं लेने दे रही है। मैंने उसपर दृष्टि भी नहीं डाली थी, किन्तु वह स्वयं आकर मेरे पैरोंपर अपने प्राण न्यौछावर करने आ पड़ी। आप तो नहीं मानेंगी, किन्तु सच्ची बात यह है कि मुझे अनिच्छापूर्वक, केवल दयाके कारण ही उसे स्वीकार करना पडा है। [कटुताके साथ] मैं अगस्त्यका शिष्य, भरतोंमे श्रेष्ठ इस दस्युकन्याके साथ घर बसाकर बैठा हूँ। अनेक बार रोम-रोम थर्रा उठता है। [गिड़गिड़ाकर] किन्तु क्या करूँ भगवती ! मैंने भरतोंका नाम कलंकित किया है। पर मैं कर ही क्या सकता हूँ ? इसकी करुणाजनक तन्मयता यमके पाशसे भी अधिक क्रूर है—अभेद्य है। [नीची दृष्टि किए खड़ा रह जाता है।]

लोपामुद्रा

[स्नेहसे विश्वरथके कन्धेपर हाथ रखकर।] इसमें तुम्हारा कुछ भी दोष नहीं है पुत्रक ! इस कन्याके हृदयमें अपने पिताके जैसा ही उदार स्वभाव और स्नेह भरा हुआ है।

विश्वरथ

यह बात गुरुजीके कानोंतक पहुँचेगी तो भला वे क्या कहेंगे ?

लोपामुद्रा

मुनिसे तो मैं इधर कई वर्षोंसे नहीं मिली हूँ। पर जो सुना है वह यदि सच है तो वे तुम्हें क्षमा नहीं करेंगे। [भाव-

पूर्वक हँसकर] पर मैं यह सब नहीं मानती हूँ। मुझे तो चमड़ीके रङ्गमें कोई स्वभाव समाया हुआ दिखाई नहीं देता!

विश्वरथ

[आँखें उठाकर] [illegible] कह रही हैं या मेरी हँसी उड़ा रही हैं?

लोपामुद्रा

सच कहती हूँ।

विश्वरथ

भगवती! मेरा मन भी यही कहता है। आप ठीक कह रही हैं। हम इन दस्युओंका संहार करते हैं, इन्हें देवोंके द्वेष्टा मानते हैं, पर—पर—इतने दिनोंके परिचयके पश्चात् मुझे निश्चय हो गया है कि ये लोग असुर नहीं हैं।

लोपामुद्रा

उस भैरवको छोड़कर। यदि उसका बस चले तो वह अपनी आँखोंसे ही मुझे समूची निगल जाय!

विश्वरथ

हाँ, वही एक दुष्ट है। पर अन्य लोग बहुत समझदार और सरल हैं। मैं चाहता हूँ कि उनके कुछ गुण हम लोगोंमें भी होते तो अच्छा होता।

लोपामुद्रा

पर जबतक ये देवोंसे द्वेष करते हैं, तबतक इनका संहार किए बिना काम कैसे चलेगा? पर बैठ जाओ न विश्वरथ। [वृक्षके थालेपर बैठती है।] मुझे अपनी सारी कथा तो बता जाओ। हम लोग कितने वर्षोंपर मिले हैं। [विश्वरथ लोपामुद्राके पैरोंके पास बैठता है।]

विश्वरथ

चौदह वर्ष बीत गए—देखते-देखते मैं कितना बड़ा हो गया हूँ—

लोपामुद्रा

[प्रशंसापूर्वक देखकर] मानो सविता जैसा लगता हो। [हँसकर] शाम्बरी पागल हो गई हो तो उसमें अचरज ही क्या है ? फिर ?

विश्वरथ

फिर क्या ? मैत्रावरुण और अथर्वणने मुझे विद्या प्रदान की और आज सात महीने हो गए मैं यहाँ पड़ा सड़ रहा हूँ। [थोड़ी देर देखते रहकर] मैं मनुष्य नहीं रह गया हूँ। दिन निकलता है और ढल जाता है। मेरे भरत भी भूली हुई स्मरण सृष्टिके समान मन्द पड़ गए हैं। स्वजन, घोषा माँ, सत्या, अथर्वण, सभी बचपनमें सुनी हुई कथाके पात्रोंके समान अदृष्ट होने लगते हैं भगवती !

[ऋक्ष लड़खड़ाता हुआ आता है।]

ऋक्ष

[हकलाता हुआ।] भ-भ-भगवती ! मैंने वचनका पालन किया है। मैं व-व-वचन-भंग कभी नहीं करता हूँ। स-स-सच कहता हूँ। मैंने सुराका स्पर्श तक नहीं किया है। [विश्वरथ खड़ा होकर ऋक्षके पास जाता है।]

विश्वरथ

[हाथ पकड़कर झकझोरता है।] क्या बकते हो ऋक्ष ?

लोपामुद्रा

देखो कौशिक ! यह अभी-अभी मुझे वचन देकर गया था कि मैं सुराका कभी स्पर्श नहीं करूँगा ।

ऋक्ष

[हास्यजनक हेकड़ीसे] स-स-सच बात है । मैंने नहीं किया है ! [लड़खड़ाता है ।]

विश्वरथ

फिर यह क्या है ?

ऋक्ष

[हेकड़ी के साथ उसकी ओर देखता है ।] यह क्या-क्या-क्या ! मैंने सुराका कहाँ स्पर्श किया है ? मैंने अपने वचनका पालन किया है ।

विश्वरथ

तब वह पेटमें कैसे पहुँच गई ?

ऋक्ष

व-व-वह नकटी उड़ेल गई । [हास्यजनक दैन्यके साथ ।] भगवती ! एक-एक अक्षर सत्य कह रहा हूँ । मैंने इस हाथसे एक बूँद नहीं स्पर्श की है ।

लोपामुद्रा

बहुत अच्छा भाई ! तुम बैठ तो जाओ ।

ऋक्ष

इस विश्वरथ का रत्तीभर विश्वास न कीजिएगा । हा-हा-हा-हा [हँसता है ।] मैंने वचन पाला है ।

लोपामुद्रा

अच्छा—अच्छा ।

[ऋच आकर लोपामुद्राके पैरोंके पास बैठ जाता है। थोड़ी देरमें लोपामुद्रा उसका सिर सहलाती है।]

विश्वरथ

किन्तु सप्तसिन्धुके क्या समाचार हैं? गुरुवर्य क्या कर रहे हैं? यह युद्ध कहाँ तक पहुँचा है?

लोपामुद्रा

[ऋचको सहलाते हुए] मैं तो बहुत कम जानती हूँ। तुम दोनोंको जब शम्बर उड़ा ले आया, उसके पश्चात् उसने समझौतेके लिये एक दूत भेजा था।

विश्वरथ

वह तुग्र—हाँ हमें मिला था वह—

लोपामुद्रा

अच्छा? तो शम्बर अपने गढ लौटा लेना चाहता था। इसके उत्तरमें मैत्रावरुण युद्धमें उतर पड़े। उन्होंने उत्तर दिया कि दासके साथ मैत्री नहीं की जा सकती।

विश्वरथ

और दिवोदास?

लोपामुद्रा

दिवोदास तो अतिथिग्व पक्थोंके साथ लड़नेमें लगे थे। सृंजयराज सोमक अस्वस्थ थे। अथर्वण ने कहला दिया कि—शम्बरके गढ उसे लौटा ही देना ठीक होगा।

विश्वरथ

हूँ! इसीसे तो शम्बर अबतक भरतोंको जीत रहा है?

लोपामुद्रा

हाँ, यह बात तो सत्य है कि शम्बर हारा नहीं है। पर मैत्रा-

वरुणने इन थोड़े महीनोंमे ही तुम्हारे भरतोंकी कीर्ति अमर कर दी है।

विश्वरथ

[हर्षपूर्वक] अच्छा ? कैसे ?

ऋक्ष

[आँखें खोलकर] भला वह कैसे ? मैं भी—मैं भी यही पूछना चाहता हूँ।

लोपामुद्रा

[ऋक्षको सहलाती हुई] शम्बर जैसा सीधा यहाँ लगता है वैसा युद्धके समय नहीं रहता। वहाँपर वह वरुणके ही समान क्रूर और कपटी बन जाता है। वनों और पर्वतोंका तो वह राजा ही ठहरा इसलिये उनमे पैठ पैठकर उसे खोजना पड़ता है।

ऋक्ष

मैं भी तो यही कहता हूँ !

लोपामुद्रा

हाँ, हाँ। [ऋक्षको सहलाती है]

विश्वरथ

तो गुरुदेवका क्या हुआ ?

लोपामुद्रा

[सम्हलकर बैठती हुई।] उन्होंने जैसे पराक्रम किए हैं कौशिक ! वैसे सप्तसिन्धुमे किसी ने नहीं किए। उन्होंने इन्द्रकी सहायतासे युद्ध आरम्भ किया। इन्द्रने जब उन्हें छोड़ दिया तो उन्होंने अश्विनोंकी सहायतासे वन फूँक डाले, शतद्रुका जल

उलीच दिया और पर्वतोंको लाँघ गए। सरस्वती-तीरके तपोवनोंको जलाकर भस्म कर डालनेके लिये जो शम्बर आया था, वह शतद्रुके आगे न बढ़ सका तो नहीं ही बढ़ सका।

विश्वरथ

किन्तु सुनते हैं कि शम्बर जीत गया!

ऋक्ष

मै भी तो यही कहता हूँ।

लोपामुद्रा

हाँ, आज वह विजयी है। उसने अपने गढ़ छीन लिए हैं। पर न तो तुम्हारे भरत लोग ही आत्म सम्मान छोड़ेंगे और न मैत्रावरुण ही डिगनेवाले हैं। वे लोग शतद्रु और सरस्वतीके बीचका मार्ग रोके बैठे हैं। जहाँ कल वन थे वहाँ आज भरत लोग गाँव बसा रहे हैं!

विश्वरथ

धन्य है गुरुवर्य!

लोपामुद्रा

[उत्साह पूर्वक] सचमुच धन्य है। अब तो सुना है कि इन्द्र भी कुछ-कुछ झुक चले हैं और उन्होंने भी सहायता देनेका वचन दिया है।

ऋक्ष

मैं भी तो यही कहता हूँ!

लोपामुद्रा

[हँसकर] हाँ, वह तो मैं भली-भाँति जानती हूँ। तुम चुपचाप बैठे रहो।

विश्वरथ

बस यही मनाता हूँ कि इस कारागृहसे कब छुटकारा मिले !

लोपामुद्रा

थोड़े ही दिनोंमें ! मुझे देवी ऊषा ने वचन दिया है। मुझपर होनेवाले अत्याचार देवता सहन नहीं कर सकेंगे !

ऋक्ष

नहीं सहन कर सकते— [खड़ा हो जाता है।] नहीं सहन कर सकते !

विश्वरथ

बैठ जाओ !

ऋक्ष

नहीं बैठूँगा !

विश्वरथ

[खड़ा होकर समझाता है।] जाओ, जाकर सो जाओ।

ऋक्ष

नहीं जाऊँगा ! [विश्वरथकी ओर घूरता है।]

लोपामुद्रा

[हँसकर बीचमें आजाती है।] ऋक्ष ! अभी अभी इतना पश्चाताप करके भी तुम जैसेके तैसे रह गए !

ऋक्ष

भ-भ- भगवती ! मैं ? अभी भी मुझसे पश्चातापके निर्झर फूट रहे हैं।

लोपामुद्रा

किन्तु वे निर्झर तुरन्त ही सूख जाते हैं !

ऋक्ष

[रुदनके स्वरमें।] तु-तु-तुम भी सन्देह करती हो। भ-भ-भगवती ! मुझे क्षमा करो ! मै ब-ब-बहुत अधम हूँ ! मुझे बड़ा पछतावा हो रहा है। [हाथ जोड़कर अधखुली आँखसे देखता रह जाता है।] मुझे क्षमा क-क-कर दिया ? कर दिया ? सच-मुच ? नहीं - मैं - पापी हूँ। [रोता है।] मैं पै-पै पैरों पड़ता हूँ [पैरों पकड़नेके लिये बढ़ते ही गिर पड़ता है।]

लोपामुद्रा

विश्वरथ ! अब इसे ले जाओ ! प्रातःकाल होगा तो इसका सूर्य्य उदित होगा।

विश्वरथ

यह अपने नेत्रोंसे पश्चात्तापके जितने आँसू निकालेगा उतने ही सुरा पीकर फिर भर लेगा !

लोपामुद्रा

बेचारा ! कारावास का जीवन ही ऐसा होता है। कंचन-को भी वह काला कर डालता है।

विश्वरथ

[ऋक्षसे] चलो-चलो !

ऋक्ष

और नहीं तो मैं कर क्या रहा हूँ ? भ-भ-भगवती ! मुझे बड़ा पश्चात्ताप है। [विश्वरथ ऋक्षका हाथ पकड़कर ले जाता है।]

लोपामुद्रा

हव्यवाहन ! आर्योंकी क्या दशा होनेवाली है ? यदि शम्बर

जीत जाय—यदि आर्योंको दस्युओंका आधिपत्य स्वीकार करना पड़े—तो तो क्या होगा ? देवि ! देवि ! इस विनाशसे उद्धार कर लो ! मैत्रावरुणको विजय प्रदान करो और सप्त-सिन्धुके आर्योंको निर्भय कर दो । [अग्निके पास जाकर ईंधन लगाती है और उससे निकट घुटनोंके बल बैठकर प्रार्थना करती है ।] हमारी क्या गति होनेवाली है ? यदि शम्बर विजयी हो गया तो हमें विवश होकर दस्युओंकी सेवा स्वीकार करनी पड़ेगी । और उसके पश्चात् हमारा तेज मन्द पड़ जायगा, हमारा तप निष्प्राण हो जायगा और हमारी शुद्धता लुप्त हो जायगी । और-और सभी ऋत हो जायँगे । [थोड़ी देर बैठी रह जाती है ।] विश्वरथको देवोंने कितना सौन्दर्य दिया है । [हँसकर] किन्तु मैं इसे निराश करने आ रही हूँ । देवि ! मेरे रूपने न जाने कितनोंको संताप दिया है, किन्तु इस बालककी रक्षा करना । [कुछ रुककर] जब तक विश्वरथ जैसे लोग विद्यमान हैं, तबतक देवगण आर्योंका साथ नहीं छोड़ेंगे !······ और देव ! इन दस्युओंमें सद्बुद्धि प्रेरित कर दो तो कितनी अच्छी बात हो ! [लोपामुद्रा अपनी चोटी खोल देती है और अग्नि सँवारकर मृगछालापर सो जाती है । थोड़ी देर करवटें बदलनेपर उसे नींद आ जाती है । भैरव धीरे-धीरे आता है, चारों ओर देखता है और लोपामुद्राके पास आता है । थोड़ी देर वह लिप्सा से दुष्टतापूर्वक हँसता है और हाथ फैलाकर चुम्बन करनेको उद्यत होता है । एकाएक लोपामुद्रा जाग उठती है और उठकर दूर हटनेका प्रयत्न करती है । भैरव उसे बाहुओंमें जकड़ लेता है ।]

लोपामुद्रा

कौन है ? कौन है ?

भैरव

चुप, नहीं तो [लोपामुद्राका मुँह बन्द करना चाहता है।]

लोपामुद्रा

देव! इन्द्र! रक्षा करो! विश्वरथ! ओ—

भैरव

चुप! [लोपामुद्राके मुँहपर हाथ रखता है।]

लोपामुद्रा

ओ-ओ-ओ—

[विश्वरथ हाँफता, घबराता हुआ आता है और छलाँग मारकर भैरव से जूझ जाता है।]

विश्वरथ

कौन भैरव? चाण्डाल!

[भैरव लोपामुद्राको छोड़ देता है और विश्वरथसे लड़ना चाहता है।]

भैरव

तू! [दाँत पीसकर] तू!

[दोनों एक दूसरेसे जूझते हैं।

विश्वरथ

हूँ!

भैरव

ले!

लोपामुद्रा

[हाथ जोड़कर] आओ मघवा। दौड़ो हमारी रक्षाके लिये। ऋच! ऋच!

भैरव

ऊ ऊ !

[जूझते हुए विश्वरथको फेंक देता है।]

विश्वरथ

ओ-आ !

[भैरव विश्वरथकी छातीपर चढ़ बैठता है।]

लोपामुद्रा

ओ देव !

विश्वरथ

[रुँधे कंठसे] इसकी कटार छीन लो।

लोपामुद्रा

साहससे काम लो !

[भैरवको पीछेसे पकड़कर खींच ली है। भैरव कटार खींचना चाहता है, लोपामुद्रा उसे रोकती है; वह लोपामुद्राको धक्का देता है।]

लोपामुद्रा

पापी ! असुर !

[जिस हाथसे भैरव कटार खींच रहा है उसमें झुककर काट खाती है।]

भैरव

ओः ! [दाँत पीसकर विश्वरथका गला टटोलता है।] उग्र-काल तेरी राह देख रहे हैं। ई-ई-ई-ऊ-

[गला दबाता है।]

विश्वरथ

[घबराते हुए ।]

ओ-ओ !

[उग्रा आती है, देखती है और सिंहिनीके समान अपनी कटार निकालकर भैरवपर झपटती है ।]

उग्रा

मेरे कौशिक । अरे बाप रे ! भैरव नीच [भैरवके गलेपर कटार रखकर] उठ-उठ ।

भैरव

तू कहाँसे आ धमकी ?—[कटारकी नोक चुभनेसे पीड़ित होता है ।] ओ ! ओ ! [विश्वरथको छोड़कर भैरव उठ खड़ा होता है, दाँत पीसता है, उग्राकी ओर मुक्का तानता है और सिर हिलाकर किलकारी मारता हुआ भाग जाता है । मूर्छित कौशिककी ओर उग्रा घबराकर देखती है ।]

उग्रा

मेरे कौशिक—

[उसके पास मूर्छित होकर गिर पड़ती है ।]

लोपामुद्रा

पुत्रक !

[मूर्छित विश्वरथपर वह झुकती है, उसके मुख पर हास्य है ।]

[पर्दा गिरता है ।]

द्वितीय अंक

[एक महीने पश्चात् सन्ध्या समय । उग्राकी बड़ी-सी कुटी । एक ओर गढ़का कोट है । कुटीके बाहर मृगचर्मके आसनपर बैठी हुई उग्रा, तुम्रकी स्त्री दागीसे चोटी गुँथवा रही है । सूर्यकी किरणोंमें उसके लम्बे काले बाल चमक रहे हैं । थोड़ी-थोड़ी देरमें वह आँखे नचाती है और हिलडुल जाती है । दागी कभी-कभी लाड़से उसे चपतिया देती है । सामने दो-तीन मोर-पंख पड़े हैं । दागी लगभग पचास बरसकी दुबली और लम्बी दस्यु-स्त्री है ।]

उग्रा

दागी ! कैसे बाल खींच रही है ?

दागी

सीधी बैठ न ? [सिरमें चपत लगाती है ।]

उग्रा

और कुल इतने ही मोर-पंख क्यों लाई ?

दागी

इससे अधिक लाती कहाँसे ?

उग्रा

[मुँह चढ़ाकर] इतनेसे भला क्या होगा ? शम्बरकी पुत्रीके लिये बस इतनेसे पंख ? जा और लेकर आ ।

दागी

क्यों आज कुछ बहुत रस आ गया है क्या ?

उग्रा

[दागीके गलेसे लिपटकर] चुप-चुप। किसीसे कहना मत। आज कौशिक बड़े प्रसन्न हैं।

दागी

पगली! हम हार रहे हैं, इसीसे वे प्रसन्न हो रहे हैं।

उग्रा

चल चल। शम्बरको कौन हरा सकता है ?

दागी

[खेदपूर्वक] अब तो नीचेसे भी सब कुछ आना बंद हो गया है। इसीलिये जितने मोर-पंख तुम्हें चाहिएँ उतने नहीं मिल सके।

उग्रा

देख, आज हर्षके दिन तू व्यर्थ ही जी दुखानेवाली बातें न छेड। शम्बर आजतक कभी नहीं हारे हैं। मैं तो जब नन्हीं सी थी तभीसे सुनती आ रही हूँ—आज हारे और कल जीते [एकाएक खड़ी होकर] अरी, वे आ गए!

विश्वरथ

[विश्वरथ उछलता हुआ आता है। उसकी आँखें चमक रही हैं और वह हँस रहा है।] शाम्बरी! जूड़ा गुँथवा रही हो क्या! देखो तो सही, कैसा सरस युद्ध चल रहा है। यहाँसे सब दिखाई पड़ रहा है।

[कोटपरसे देखती है।]

४

उग्रा

[जहाँ थी वहींसे खड़े-खड़े] मैं युद्ध नहीं देखना चाहती। क्या अभी युद्ध देखनेसे तुम्हारा जी नहीं भरा? यहाँ तो आकर बैठो!

विश्वरथ

मै बैठूँ कैसे? वह देखो! देखो! वे धूलके वात्याचक्र उठ रहे हैं न! वहीं मेरे गुरु और तुम्हारे पिता लड़ रहे हैं।

उग्रा

[अँगड़ाई लेकर उधर जाती है।] कैसे जाना?

विश्वरथ

[उत्साहपूर्वक] ठहरो, मैं भगवतीको बुला लाता हूँ। [जाता है।]

उग्रा

[निःश्वास छोड़कर] उस गौरांगीके बिना इन्हें पलभर चैन नहीं पड़ती।

दागी

इस गौरांगीका पौरा ही बड़ा खोटा है।

उग्रा

परन्तु वह तो कौशिकको अपना पुत्र मानती है।

दागी

इस गौरागीकी चाल भला कोई जान सकता है? कल तुमसे खिलखिला कर बातें कर रही थी। और जबसे इसके पैर यहाँ पड़े तभीसे उग्रकाल भी हमपर रूठ गए हैं। कल—जानती हो?

उग्रा

नहीं ! [उग्रा धीरेसे घबराए हुए स्वरमें] नहीं तो ।

दागी

उग्रकालको भोग चढ़ाते ही बलि दिया हुआ बकरा मे-मे करके बोल उठा ।

उग्रा

[भयपूर्वक] हाय ! हाय !

दागी

इसीलिये तो सब चौपट हुआ जा रहा है। [निःश्वास छोड़ती है ।]

उग्रा

तो उग्रकाल उसे बुला क्यों नहीं लेते कि सब बला ही टल जाय ।

दागी

कौन जाने क्या बात है ? भैरव होता तो कुछ बताता । [लोपामुद्रा और ऋक्षको लेकर उमंगमें भरा हुआ विश्वरथ आता है । तीनों उल्लसित होकर कोटके पास खड़े होकर नीचे देखते हैं । हर्षमग्न उग्रा ओठ दबाकर देख रही है ।]

विश्वरथ

वह पर्वत दिखाई दे रहा है न—उसी ओर—

लोपामुद्रा

वहाँ—उस जलाशयके पास ?

उग्रा

[धीरे-धीरे उन सबके पास आती है ।] क्या है ? देखूँ तो ? [दागी कुछ दूरपर खड़ी रहती है ।]

विश्वरथ

[उग्राके कन्धेपर हाथ रखकर] वह जलाशय दिखाई दे रहा है न, उसके पालपर देखो—उधर-उधर उस ओर—उस धूलके वात्याचक्रमें। वह मेरे गुरुजीका रथ है।

लोपामुद्रा

देव! [दृष्टि उठाकर] आर्योंके शत्रुओंका संहार करो! अगस्त्य और मैत्रावरुणको अपना बल दो। भरतोंके बाणमें अपने वज्रका आरोपण करो!

ऋक्ष

[उछलकर] अरे किन्तु वह क्या है? घ-घ-घ-घ

विश्वरथ-लोपामुद्रा-उग्रा

क्या? क्या?

ऋक्ष

वह दौड़ता हुआ बादल-सा जो चला आ रहा है।

लोपामुद्रा

[आँखोंपर हाथकी आड़ करके] कोई आ अवश्य रहा है।

विश्वरथ

[लोपामुद्राका हाथ पकड़कर उत्साह से] भगवती—

लोपामुद्रा

क्यों?

विश्वरथ

ये तो महाअथर्वणके अश्वराज हैं। वे ही हैं। दूसरा किसका सैन्य इतने वेगसे उमड़ सकता है?

लोपामुद्रा

[हँसकर] ऐसा ही लगता है। महाअथर्वण मेरी रक्षाके

लिये आक्रमण किए बिना नहीं रह सकते। धन्य है भृगुवर्य!

उग्रा

ये कौन हैं?

विश्वरथ

मेरे बहनोई हैं। उनके पास सहस्रों श्वेत अश्व हैं। अब अवश्य शम्बर—[हिचकिचाता है]

उग्रा

[गम्भीर होकर] क्या होगा मेरे पिता का?

लोपामुद्रा

वे तो इसी गढ़की ओर आते दिखाई दे रहे हैं।

ऋक्ष

[उछलकर] छूट गए! छूट गए। [विश्वरथ गले लगाता है।]

विश्वरथ

देखो—वह देखो—इस ओर दस्यु तितर-बितर होकर भाग चले हैं।

उग्रा

[विश्वरथसे] पर मेरे पिताका क्या होगा? [कोई सुनता ही नहीं है।]

लोपामुद्रा

विश्वरथ! अथवर्णके परशुमे वज्रकी धार है। वे जब चढाई करते हैं तब पर्वत भी काँप उठते हैं। [स्नेहपूर्वक] कौशिक! पर मेरे पिताजी भी मुझपर इतना प्रेम न दिखाते।

विश्वरथ

इसीलिये तो उन्होंने मुझे छुड़ानेके लिए चढाई नहीं की, किन्तु तुम्हें छुड़ानेके लिये तत्काल चढ़ आए हैं।

उग्रा

[लोपामुद्राका हाथ पकड़कर] गौरांगी, मेरे पिताका क्या होगा ?

लोपामुद्रा

[स्नेहपूर्वक] देखें, क्या होता है ? [उग्राकी पीठपर हाथ रखती है।]···बच्ची······ !

ऋक्ष

महाअथर्वणने बड़ा अच्छा किया—मारो।

उग्रा

कौशिक ! मेरे पिताको तुम्हारे अथर्वण मार डालेंगे ?

[सब चुप हो जाते हैं। झोपड़ीके पीछेसे तुग्र और दो दस्यु योद्धा आते हैं। तुग्र उन्हें कोट दिखा रहा है।]

तुग्र

इस स्थानपर कोटकी भीत आधे पुरुष जितनी ऊँची और करनी होगी। [उँगलीसे दिखाकर] पर पहले उस ओर प्रारम्भ करो।

दस्यु

जैसी आज्ञा !

लोपामुद्रा

क्या कर रहे हो तुग्र !

तुग्र

[सिर हिलाकर] यह कोट ऊँचा करवा रहा हूँ। जान

पड़ता है तुम्हारे पक्षके लोग यहाँ पास ही आ पहुँचे हैं।

ऋक्ष

[ताली बजाता है।] धन्य है! धन्य है! मैं भी यही कह रहा था।

विश्वरथ

तुग्र! यह किसकी सेना आ रही है? धूल उड़ाती हुई, बिजलीकी सी तीव्र गतिसे?

तुग्र

[सिर हिलाकर] तुम्हारे अथर्वणकी।

लोपामुद्रा

वे भी निदान कूद ही पड़े। मेरा तो विश्वास पक्का ही था।

तुग्र

[सिर हिलाकर खेदपूर्वक] गौरांगी। तुमने आते समय दस्युराजसे ठीक ही कहा था। तुम्हें पकड़कर उसने बहुत बड़ी भूल की है।

विश्वरथ

[हँसकर] अब तो निश्चय हो गया न?

तुग्र

हम क्या समझते थे कि गौरांगीको वन्दी कर लेनेपर तुम्हारे पक्षके लोग पागल हो जायँगे? मुझे तो सब समाचार अभी अभी मिले हैं। जिन्होंने आजतक कभी हमारे विरुद्ध शस्त्र नहीं उठाए थे, वे भी आज लड़ने-मरनेपर उतारू हो गए हैं।

लोपामुद्रा

किस-किसने चढ़ाई की है?

तुग्र

गाँव-गाँवमें आग भड़क उठी है। वृद्ध और बालक सभी निकल पड़े हैं।

विश्वरथ

अच्छा !

तुग्र

[खेदपूर्वक] हाँ, अथर्वणके अश्वारोही, वात्याचक्रके समान चारों ओर यही कहते हुए घूम गए हैं कि लोपामुद्राको शम्बर पकड़ ले गया है, लोपामुद्राको शम्बर पकड़ ले गया है। अथर्वण भी आ गए हैं। दिवोदास भी पक्थोंसे सन्धि करके हमारे विरुद्ध चला आ रहा है ! सृञ्जय भी आ रहे हैं। पुरुओंने भी सेना भेज दी है।

ऋक्ष

अच्छा हुआ, मैं तो यही कहता ही था।

विश्वरथ

और तुम्हारी सेनाओंका क्या हुआ ?

तुग्र

[कठोरतापूर्वक] चारों ओर हमारे गढ़ गिरते जा रहे हैं। दिवोदास—भयकर, दुष्ट दिवोदास—उस ओरसे बढ़ा चला आ रहा है।

लोपामुद्रा

तुग्र ! देखो ! [दिखाकर] ये तुम्हारे दस्युराज पीछे हट रहे हैं। अथर्वणके घोड़ोंको रोकनेका भला किसमें साहस है ?

उग्रा

पिताजीका क्या होगा ?

तुग्र

दस्युराजका बाल नहीं बाँका हो सकता। इस गढ़में बैठे-बैठे हम लोग बारह बरसतक सबको थका सकते हैं!

लोपामुद्रा

[विश्वरथसे] केवल तुम्हारे गुरु वशिष्ठ और मेरे भाईने ही मुझे त्याग रक्खा है, नहीं तो हमारे यहाँके सभी लोग मुझपर स्नेह रखते हैं।

विश्वरथ

भगवती तुम सप्तसिन्धुकी आँखोंकी पुतली हो।

तुग्र

एक बात तो सच है कि जबसे गौरांगीने यहाँ पैर रक्खा है तभीसे यहाँ अपशकुन हो रहे हैं।

उग्रा

[विश्वरथसे चिंतापूर्वक] विश्वरथ! किन्तु आप फिर यहाँ रहेंगे या नहीं?

विश्वरथ

[ऊबकर] शाम्बरी! मेरे अतिरिक्त तुम्हे और भी कुछ सूझता है या नहीं?

उग्रा

तुम्हारे अतिरिक्त मुझे सूझ ही क्या सकता है?

[नेपथ्यमें लोगोंका कोलाहल सुनाई पड़ता है और एक दो किलकारियाँ सुनाई पड़ती हैं।]

तुग्र

यह कैसा कोलाहल हो रहा है? कोई आया है क्या?

लोपामुद्रा

[एक दस्यु आता है।] कौन आया है ?

दस्यु

तुग्र! भैरव आया है!

तुग्र

[भ्रूभंग करके] भैरव! क्यों?

विश्वरथ

भैरव!

उग्रा

[क्रोधसे पैर पटककर] यह मुआ कहाँसे आ धमका है!

तुग्र

क्या कह रही हो, उग्रा! [योद्धाके वेशमें क्रोधमें भरा भैरव आता है। उसका शरीर मार्गकी धूलसे भरा है।] आओ आओ भैरव! क्यों, ऐसे अचानक? क्या समाचार हैं?

भैरव

[सबकी ओर दुष्टतापूर्वक देखता है।] बुरा, बड़ा बुरा समाचार है। उग्रकाल कुपित हो गए हैं। [द्वेषसे ओठ पीसकर] चारों ओर गढ़ घिर रहे हैं, सेना कटती जा रही है। हमारे शत्रुओंकी सेना टिड्डी-दलके समान उमड़ी चली आ रही है। चलो। [वह तुग्रका हाथ पकड़कर उसे साथ ले जाता है।] उग्रकाल प्रसन्न हो जाओ! प्रसन्न होओ। ई-ई-ई-ऊ!

[दोनों जाते हैं। जाते जाते भैरव लोपामुद्राके ऊपर भयंकर दृष्टि डालता है।]

लोपामुद्रा

यह भी क्या मनुष्य है? ऐसा क्रूर और भयंकर मनुष्य मैंने

कभी देखा नहीं।

विश्वरथ

भगवती। अब हम अवश्य मुक्त हो जायँगे। मुझे पक्का विश्वास है।

लोपामुद्रा

बेटा! देवी उषाने भी मुझे वचन दिया है!

ऋक्ष

मैं भी यही कहता हूँ। पर भूखे पेट मुझसे बात नहीं हो रही है। मैं भोजन जमाकर आता हूँ।

[जाता है।]

उग्रा

[गिड़गिड़ाकर] तो कौशिक! तुम चले ही जाओगे? फिर मेरा क्या होगा? मुझे भी तो कुछ बताओ!

लोपामुद्रा

बैठो बेटी! [सब बैठ जाते हैं।] देखो इस प्रकार पागल न बनो! तुम्हारी और हमारी जातिवालोंमे परस्पर आद्य वैर है। पिता और पति दोनों हो तुम्हारे साथ रहें, और दोनोंका सुख तुम्हें मिले, यह तो आशा ही करना व्यर्थ है।

उग्रा

[रुदनभरे स्वरमें] पर क्यों? जब ये दोनों रहते हैं तब मुझे ऐसे अच्छा लगता है कि बस!

लोपामुद्रा

बहन! पति और गुरुजन दोनोंको कोई एक साथ कभी रख सका है? और तेरी व्याकुलताका तो कोई पार ही नहीं है। शम्बर और मैत्रावरुणमें सन्धि होना असम्भव है। और यदि

हो भी जाय तो तुम यहीं रह जाओगी और कौशिक अपने भरतोंके पास चले जायँगे।

उग्रा

[बड़े प्रयाससे समझनेका प्रयत्न करती है] तो क्या कौशिक मुझे नहीं ले जायँगे?

लोपामुद्रा

[सिर हिलाकर] ले तो जा सकते हैं। पर यहाँ तो तुम राजाकी लाड़िली बेटी हो। किन्तु वहाँ बहन! बहन! भरतोंके यहाँ तुम्हारे योग्य स्थान नही मिलेगा।

उग्रा

[उलझनमें पड़कर] क्यो नहीं? मैं भरतोंकी रानी बनूँगी।

विश्वरथ

[चिल्लाकर] भोली तुम नहीं जानती? हमारे यहाँ, ओ देव! तुम्हे मैं क्या स्थान दे सकता हूँ!

उग्रा

[सरलतापूर्वक] मुझे तो कुछ चाहिए नहीं। मैं तो केवल तुम्हारे पास रहना चाहती हूँ।

[तुग्र आता है और कठोर मुद्रासे केवल उग्राकी ओर देखता है।]

तुग्र

[कठोरतापूर्वक] उग्रा। चलो, माँ बुला रही हैं।

उग्रा

क्यों?

तुग्र

काम है।

विश्वरथ

कुछ नया समाचार है तुग्र?

तुम्र

[सामने बिना देखे] कुछ नहीं।

उग्रा

मैं अभी आती हूँ कौशिक! चले मत जाना।

[तुम्रके साथ जाती है]

लोपामुद्रा

तुम्र इतना गम्भीर क्यों है?

विश्वरथ

कुछ नई बात अवश्य है। भगवती! हम लोग छूट जायँगे तो इस बेचारी शाम्बरीका क्या होगा? इसका हृदय कुसुमकी कलीके समान कोमल है। यह अवश्य प्राण दे देगी!

लोपामुद्रा

मैं भी यही सोच रही हूँ कौशिक!

विश्वरथ

[कटुता-पूर्वक] और हम लोग तो विशुद्ध-हृदयी आर्य हैं। जहाँ रंग-भेद हुआ कि हमारा अभिमान जागा! भगवती! अगस्त्यजीकी चरण सेवा करते-करते मुझे बरसों हो गए। पर आजतक यह वर्णद्वेष मेरी समझमे नहीं आया।

लोपामुद्रा

उसे मै समझती हूँ पुत्रक! इसी अभिमानसे हमारी विशुद्धि आजतक बनी रह सकी है। यहाँ तो शाम्बरने तुम्हें अपनी लाड़ली कन्याका पति बना रक्खा है, किन्तु तुम्हारे यहाँ भगवती घोषा इस शाम्बरीको तुच्छ दासी माननेमे भी हिचकिचाएँगी। यहाँ इन लोगोंने तुम्हें स्नेहमें बाँध लिया है और वहाँ इसे कोई सहन भी नहीं कर सकेगा।

विश्वरथ

तो क्या यही है वरुणदेवका ऋत ? यही है हमारे महर्षियोका सत्य ! मै वरुणकी प्रार्थना कर-करके थक गया हूँ पर मेरे मनको शान्ति नही मिली। अलग-अलग रगोंमें अलग-अलग प्रकारके सत्य और ऋत कैसे हो सकते हैं।

लोपामुद्रा

पुत्रक ! जहाँ तक महर्षियोकी भी दृष्टि नहीं पहुँच पाती, वहाँतक, इस अवस्थामे तेरी दृष्टि पहुँची जा रही है। ऋत भी एक ही होता है और सत्य यदि है तो वह भी एक ही है सबके लिये [खेदपूर्वक] किन्तु समझता कौन है ? और कौन समझ सकता है ?

विश्वरथ

गुरुदेव न तो स्वयं समझेंगे, न किसीको समझने ही देंगे।

लोपामुद्रा

यह अपना दुर्भाग्य है। चलो, चलकर भोजन कर लें। वह ऋक्ष भूखों मर रहा है। [कोटके बाहर देखकर] जान पड़ता है उधर सब शान्त हो गया है।

विश्वरथ

मुझे लगता है कि उस पहाड़ीके पीछे कुछ हो रहा है, किन्तु दिखाई नहीं दे रहा है। [दोनों जाते हैं।]

[थोड़ी देरमें उग्रा भयव्याकुल होकर और सिर नोचती हुई आती है।]

उग्रा

अरे बाप रे ! [आँसू पोंछकर] ओः, क्या होगा ! उग्रकाल ! क्या तुम्हें और कोई नहीं मिला कि मेरे कौशिकको भोग बनाने

पर उतारू हो गए हो? [पगलीकी भाँति बाल नोचती है।] ओः! इसे जला डालेगा......ओः—ओः मेरी आँखोंके आगे! भैरव! भैरव! यह तूने क्या किया? [विचार करके] क्या करूँ? किससे कहूँ? मेरे कौशिक। [छातीपर हाथ रखती है। दागी आती है।]

दागी

[धीमे स्वरमें] अभी आते हैं।

उग्रा

जा, जा, झटपट बुला ला। ओ मेरे कौशिक! [दागी जाती है। विश्वरथ कुछ झुँझलाया हुआ आता है।]

विश्वरथ

शाम्बरी! इतनी ही देरमे ऐसा क्या काम आ गया?

उग्रा

[लिपटकर धीरेसे] कौशिक! कौशिक! समाप्त हो गए, समाप्त हो गए!

विश्वरथ

[उग्राके कन्धेपर हाथ रखकर] क्यों क्या बात है? क्या हुआ उग्रा?

उग्रा

[रोते हुए] उग्रकालने भोग माँगा है।

विश्वरथ

भोग? किसका?

उग्रा

तुम्हारा—गौरांगीका और ऋक्षका—

विश्वरथ

[चौंककर] भोग ? हमारा ?

उग्रा

उग्रकालने अभी आकाशवाणी की है कि कल प्रातःकाल यदि तुम्हारा भोग न दिया गया—

विश्वरथ

तो ?

उग्रा

यह गढ़ गिर जायगा और शम्बर मारा जायगा।

विश्वरथ

ओः ! [कँपकँपी आ जाती है।] क्या हमे कल जला डालेंगे ? [सिरपर हाथ रखकर, आँखें फाड़कर विचार करता है।] कल प्रातःकाल ! [दाँत पीसकर] उस चाण्डालने अपना वैर निकाला है। तुम्हें किसने बतलाया ?

उग्रा

मुझे ? मैं वहीं थी ! मुझे माँकी झोपड़ीमें बन्द कर दिया था। इस दागीने मुझे पिछले द्वारसे निकाल दिया इसीलिये मैं चली आई। मै क्या करूँ ? [उससे लिपटकर] कौशिक ! कौशिक ! क्या करूँ ? [सिसकती है।]

विश्वरथ

रोओ मत, शाम्बरी ! यह रोने का समय नहीं है। [गाम्भीर्यके साथ] सुनो !

उग्रा

क्या ?

सकता है ?

विश्वरथ

[आँखोंमे आँसू भरकर देखता रह जाता है ।] तुम उग्री ! दस्युकन्या--भरतश्रेष्ठके यहाँ निभ सकोगी ?

उग्रा

[गिड़गिड़ाकर] मुझे छोड़ तो नहीं दोगे ?

विश्वरथ

[निश्चयपूर्वक] तो उग्रा हमें बचा लो। अपने पितरोंकी सौगन्ध खाकर मैं कहता हूँ कि अपने जीते जी न तुम्हे छोड़ूँगा और न दुखी होने दूँगा। देव ! मुझे वचन-बद्ध रखना !

उग्रा

मेरे कौशिक ! [कौशिकसे लिपटकर चुम्बन करती है।] कल प्रातःकालके पहले ही तुम्हे छुड़वा दूँगी !

विश्वरथ

अवश्य ?

उग्रा

जीवित रही तो ! [नाकपर उँगली रखकर] आप सब तैयार रहिएगा।

विश्वरथ

अपनी दासीसे कहना कि भगवती और ऋक्षको यहीं भिजवा दें। [उग्रा जाती है।]

विश्वरथ

यह क्या होने जा रहा है ? क्या भरतोंका पुण्य समाप्त हो गया ? इन्द्र !—देवाधिदेव ! प्रगतिके नाथ ! वृषभोंमें श्रेष्ठ ! अपने शृंगोंसे शत्रुओंका संहार क्यों नहीं कर डालते ?

[हाथ जोड़कर] अपने महाघोषसे वीर आर्योंको प्रोत्साहन दीजिए। सर्वदर्शी एकमात्र वीर! द्वेषियोंके दल-सहस्रका संहार कर डालिए। [लोपामुद्रा आती है और खड़ी खड़ी देखती रह जाती है।] महाबाहु धनुर्धर! रथपर चढ़कर मेरी रक्षाके लिये दौड़ आइए और उसी प्रकार वैरियोंका विनाश कर डालिए—अपने वज्रसे—जिस प्रकार वृत्रका विध्वंस किया था!

[आकाशकी ओर देखकर, देवका आवाहन करता हुआ चुपचाप खड़ा रह जाता है। लोपामुद्राके मुखपर प्रशंसाका भाव छा जाता है। पीछे ऋक्ष आ पहुँचता है।]

लोपामुद्रा

पुत्रक! [विश्वरथसे भेंटकर] तू राजा नहीं है, ऋषि है।

ऋक्ष

[बुदबुदाता है] मैं भी यही कहता हूँ।

विश्वरथ

[बेसुध आकाशकी ओर देखकर] मघवा मेरी प्रार्थना सुन रहे हैं। मैं देख रहा हूँ। उन्हें युद्धके लिये चढ़ते हुए मैं देख रहा हूँ। शम्बरका सिर धूलमें लोटता हुआ [सचेत होकर आँखें मलता है।] भगवती! भगवती! हम लोग समाप्त हो गए!

लोपामुद्रा

क्यों?

विश्वरथ

कल प्रातःकाल भैरव, हमें भोग बनाकर उग्रकालको चढ़ाने वाला है।

लोपामुद्रा

भोग!

ऋक्ष

[आँखें फाड़कर] मेरा भी !

विश्वरथ

कल प्रातःकाल हम तीनोंको जलाकर हमारी भस्मसे उस लिंगका लेपन किया जायगा।

लोपामुद्रा

किसने कहा ?

विश्वरथ

शाम्बरी ने स्वयं सुना है। उसे उसकी माँकी झोंपड़ीमें बद कर दिया था। पर वह चुपचाप वहाँसे भागकर चली आई और यह समाचार सुना गई। समाप्त हो गए !

ऋक्ष

पर तुम कहते क्या हो ? हम—मुझे भी—हम सबको वे मार डालेंगे ? [विश्वरथसे] सच कहते हो ? या हँसी कर रहे हो ? मुझ जैसे सज्जनको भला कौन मारनेवाला है ?

विश्वरथ

भाई ! यह क्या इस प्रकारके हँसी ठट्ठेका समय है ? [कटुतापूर्वक] प्रातःकाल हम तीनोंके भोगसे उग्रकाल प्रसन्न होंगे !

ऋक्ष

मैं मरूँगा ? इस अवस्थामे ? नहीं—नहीं—मैं नहीं मरूँगा। [बैठ जाता है।]

लोपामुद्रा

[विश्वरथके कन्धेपर हाथ रखकर] पुत्रक ! घबरानेकी कोई बात नहीं है।

ऋक्ष

[आशापूर्वक] कल प्रातःकाल क्या गुरुजी आ पहुँचेंगे ?

लोपामुद्रा

मैं यह नहीं कह रही थी। किन्तु हम घबराएँ क्यों ? कौन जाने हमारी ही आहुतिके द्वारा देवगण आर्योंको सबल बना दे।

ऋक्ष

अरे बाप रे !

विश्वरथ

[नीचे देखकर] बेचारी घोषा माँ तो रो-रोकर प्राण दे देंगी।

लोपामुद्रा

पुत्रक ! यदि हम बलिदान नहीं होंगे तो आर्य लोग विश्व-विजेता कैसे हो सकते हैं ? रुधिरके प्रवाहोंमेसे ही प्रतापकी सरिताएँ बनती हैं। [विश्वरथके कन्धेपर हाथ रखकर ममतासे] तुम यहाँसे चले जा सकते तो बड़ा अच्छा होता।

विश्वरथ

एक आशा है। शाम्बरी हमारे भागनेका मार्ग ढूँढ़ने गई है। वह भी हमारे साथ चलना चाहती है।

ऋक्ष

भाग जानेका ? हाँ, मुझे भी यही उपाय ठीक लग रहा था।

लोपामुद्रा

शाम्बरी भला क्या मार्ग ढूँढ़ेगी ? वह तो स्वयं ही बड़ी कोमल है।

विश्वरथ

किन्तु मेरे लिये वह सब कुछ करेगी।

लोपामुद्रा

मैं जानती हूँ। यह प्रेम भला कोई पंथ दिखावे तो—

ऋक्ष

[प्रसन्न होकर] अवश्य दिखावेगा ? मै भी कोई मार्ग ढूँढ़ता हूँ। [खड़ा हो जाता है।]

विश्वरथ

तुम भाई, यहीं बैठे रहो ! यह तुम्हारा काम नहीं है।

ऋक्ष

मुझे भी ऐसा ही लगने लगा है। किन्तु यदि वे मुझे मार डालेंगे तो मेरे माता-पिता क्या करेंगे ? बेचारे तड़प-तड़पकर मर जायँगे ! लुच्चे, चाण्डाल, नकटोंको और कुछ नहीं सूझा तो मुझे ही मारने पर उतारू हो गए। [सिरपर हाथ धरकर] अब मैं क्या करूँ ?

लोपामुद्रा

भगवान सविता, वरुणके पंथपर विदा हो रहे हैं। देव ! क्या पुनः अपने दर्शन देकर कृतार्थ नहीं करोगे ? [अस्तंगत सूर्यबिम्बकी ओर तेज-भर नयनोंसे एकटक देखते हुए] सूर्य ! हमारे अश्वोंको गति दो; रथोंसे धराको कम्पित कर दो ! और देव ! हमारी ऊँची उड़ती हुई पताकाओंकी रक्षा करो। रक्षा करो ! सूर्य ! शत्रुओंकी आँखोंमें अन्धकार भर दो ! सविता। [अचेत सी होकर मन्त्र पढ़ती है] हमारे बाहु सबल हैं—हम दुर्जय हैं। राजन् ! रणमें उतर पड़ो और हमे विजय प्रदान करो। [हँसते मुखसे] विश्वरथ ! सूर्य आवेंगे रथ

पर चढ़कर। देखो वे जाते-जाते हँस रहे हैं। पुत्रक! विजय हमारी ही है—जीवनमें और मृत्युमे [कोई भी बोलता नहीं है। दूर गगनमें लाल रंगोंके धुएँकी पाँते आकाशमें चढ़ रही हैं।]

ऋत्त

[उन बादलोंकी ओर हाथ करके] अरे बापरे—यह क्या?

विश्वरथ

[लोपामुद्राको दिखाकर] भगवती! देखिए देवने आपकी बात सुन ली। इन पासके जङ्गलोंमे आग लग गई है।

लोपामुद्रा

जान पड़ता है शम्बरके गढ़के कहीं आसपास ही मैत्रावरुणजी अग्निकी आन ले रहे हैं। देखो तो सही। वरुणदेव स्वयं रक्तरंजित वस्त्र धारण कर रहे हैं। सम्भव है कल प्रातःकाल ही तुम्हारे गुरुजी यहाँ आ पहुँचे।

विश्वरथ

यह आशा तो मृगजल हो चुकी है। तुग्र कह रहा था कि बारह बरसतक तो यह गढ़ गिरनेवाला है नहीं।

लोपामुद्रा

वज्र धारण करनेवाले इन्द्र यदि चन्‍ ई कर दें तो क्या नहीं हो सकता? [तुग्र आता है।]

तुग्र

[कठोर होकर] विश्वरथ यहाँ है? [हिचकिचाकर खड़ा रह जाता है।]

लोपामुद्रा

क्यों, क्या कुछ नया समाचार है?

तुग्र

कुछ नहीं, आप तीनों यहाँ है न ?

लोपामुद्रा

[हँसकर] हाँ, क्यों, कुछ काम है ?

तुग्र

[क्रूरतापूर्वक] वह देखा ? [दावानल दिखाता है।]

विश्वरथ

यह क्या है ?

तुग्र

[ओठ दबाकर] यह क्या है ? तुम्हारे गुरु हमारे गाँव जला रहे हैं। अगस्त्य कल यहाँ [नीचे खाईकी ओर इंगित करके] आ पहुँचेगा।

विश्वरथ

कल ? चलो तब तो उनके दर्शन करके कृतार्थ होंगे।

तुग्र

कल देखनेको मिलेंगे—[कँपकँपीके साथ देखता है।] हाँ, ठीक है, क्यों नहीं !

लोपामुद्रा

[मिठाससे] तुग्र ! कौशिक तुम्हें बहुत प्रिय है, क्यों ?

तुग्र

हम लोगोंमें परस्पर यह वैर न होता तो—[मोहभरी आँखोंसे देखता है।]

विश्वरथ

तुग्र ! तुमने मुझसे पिताके समान व्यवहार करनेमें उठा क्या रक्खा है ? मैं तुम्हें कभी भूल थोड़े ही सकता हूँ।

तुग्र

[अत्यन्त नम्र और स्नेही बनकर] कौशिक ! मै भी तुम्हे कभी नहीं भूलूँगा। कभी कभी जी करता है कि मुझे भी कोई तुम्हारे जैसा एक पुत्र होता। किन्तु किन्तु [यत्नपूर्वक स्वस्थ होकर] भाई ! उग्रकाल सबसे बली हैं। उनकी आज्ञा कौन उल्लंघन कर सकता है।

विश्वरथ

[स्नेह-पूर्वक] आओ तुग्र ! न जाने कब भेंट होगी। [दोनों परस्पर एक दूसरे से भेंटते हैं।]

तुग्र

[सखेद] गौरांगी ! तुम यहाँ कहाँसे आगई ?—[सिर हिलाताहै]

लोपामुद्रा

मैं ! [अत्यन्त आकर्षकताके साथ] तुग्र ! जन्म-कालसे ही मैंने किसीसे द्वेष नहीं किया। फिर तुम ऐसा क्यों कहते हो ?

तुग्र

[निःश्वास छोड़कर] तुम्हारे ही आनेसे हमारा सत्यानाश हो रहा है।

लोपामुद्रा

मैं क्या करूँ ? मुझे तो शम्बर ही यहाँ पकड़ लाया है ? मैंने उसे बहुतेरा कहा था कि मुझे पकड़नेमे तुम्हें कुछ हाथ नहीं लगेगा। तुम भी बड़े समझदार हो तुग्र ! और शम्बरके समान स्नेही मनुष्य भी मैंने नहीं देखा। फिर भी हमे मार डालनेका घोर कृत्य तुम लोग क्यों कर रहे हो ?

तुग्र

[चौकक्कर] मार डालनेका ! किसने कहा ?

शम्बर कन्या

लोपामुद्रा

मैंने जान लिया है। कल तुम हमारा भोग चढ़ानेवाले हो। क्यों? [तुग्रके कन्धेपर एक हाथ रखकर, तेज बिखेरती हुई आँखोंसे तुग्रको वशमें करती हुई] बताओ हमने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है? अथर्वणके आश्रममें मैंने शम्बरको मरनेसे बचाया था। यहाँ रहकर विश्वरथने कितनोंकी प्राणरक्षा की है। शाम्बरी इसपर प्राण देती है। तुम इसे पुत्र मानते हो। शम्बर मुझे अपनी पुत्री मानता है। फिर क्यों हमारे प्राण लेनेपर उतारू हो? [उसका स्वर क्षीण हो जाता है।]

तुग्र

[नीचे देखकर] मुझे तो अपने अन्नदाताके अनुकूल ही काम करना होगा न।

लोपामुद्रा

इस समय यदि शम्बर यहाँ होता तो मुझे उँगली तक छूनेवालेका प्राण ले लेता।

उग्र

[सिरपर हाथ रखकर] मैं क्या कर सकता हूँ?

विश्वरथ

मुझे मारोगे तो शाम्बरी प्राण दे देगी।

तुग्र

मैं जानता हूँ।

लोपामुद्रा

तब क्यों?

तुग्र

उनकी आज्ञा है।

विश्वरथ

किसकी ? भैरव की ?

तुग्र

उग्रकालकी—

लोपामुद्रा

उन दोनोंमें अन्तर क्या है ?

तुग्र

उँह—

लोपामुद्रा

[सखेद माधुर्यमें] जब हमारे रक्तकी सरिता बहेगी, तब कौन कह सकता है कि उसमे डूबकर मरनेवाले कौन-कौन होंगे ? अब भी विचार लो। हमारे मर जानेपर अगस्त्य और अथर्वणका क्रोध कहाँ पहुँचेगा यह कहने की बात नहीं है।

तुग्र

[टूटतेसे स्वरमें] वह सब उसने निश्चय कर लिया है। मैं क्या कर सकता हूँ ?

विश्वरथ

इस गढ़के रक्षक तो तुम हो। हमें कहीं छिपा दो या भगा ही दो। अब भी समय है।

तुग्र

मैं उग्रकालकी आज्ञाका कैसे उल्लंघन कर सकता हूँ ?

लोपामुद्रा

जिनसे तुम स्नेह करते हो, वे उग्रकालको ही कैसे अप्रिय हो सकते हैं ?

विश्वरथ

तुग्र ! तुम यहाँके सब मार्ग जानते हो। हमे आधी रातको यहाँ से निकल जाने दो। [दोनों हाथोंसे तुग्रका हाथ पकड़कर] उग्रकाल कभी रुष्ट नही होंगे, और हमारे पैर भी यहाँसे टल जायँगे।

तुग्र

[विवशतापूर्वक] मैं क्या करूँ ? सारा गाँव तुमपर क्रोधसे उबल रहा है। कोई जान गया तो मेरे अंग अंग चीर डाले जायँगे।

लोपामुद्रा

तुग्र ! [स्नेहपूर्वक] भाई ! बहुतसे दस्युओंने मुझे माता मान रक्खा है। शम्बरने जीवनदात्री मानकर मेरी पूजा की है। देव, मानव और दस्यु सबको मैं प्रिय हूँ ! मैं तो निःशस्त्र स्त्री हूँ। क्या मुझे भी तुम बाँधोगे ? मारोगे ? जीती जला दोगे ? [हृदय-वेधक मृदुतासे] तुम वीर तुग्र ! तुम मेरा सिर काटोगे ? मेरे बाल पकड़कर उग्रकालके सामने वध करोगे ?

तुग्र

[अकुलाकर] गौरागी। नहीं—नहीं—

लोपामुद्रा

[उतावलीमें] तुम वीर हो, स्वामिभक्त हो। हमें चले जाने दोगे तो कौन जान सकेगा ? किसे दुःख होगा ? हाँ, भैरवकी बात दूसरी है। वह जिसका उपभोग नहीं कर सका उसे आज वह मिटा देना चाहता है।

तुग्र

[उलझनमें पड़कर] यह तो सच है।

लोपामुद्रा

क्यों तुग्र ! तो क्या तुम भी ऐसे घोर कुकर्मीका साथ दोगे !

[उग्रा दौड़ती हुई आती है।]

उग्रा

[हर्षपूर्वक] कौशिक !

लोपामुद्रा

उग्रा ! घबराओ मत। तुग्र! हमारे साथ इसका भी वध करोगे ?

तुग्र

[घबराकर] नहीं ! नहीं।

लोपामुद्रा

तो हमारी प्रार्थना अस्वीकार न करो।

तुग्र

[शरणमें आकर] गौरांगी ! तुममे न जाने क्या जादू है। [निश्चयपूर्वक] मैं आप लोगोंकी अवश्य रक्षा करूँगा।

उग्रा

मेरे तुग्र, क्या सच ? [तुग्रके गलेसे लिपटकर] मेरे कौशिकको बचा लो। मार्ग मैंने खोज निकाला है।

तुग्र

मैं सभी मार्ग जानता हूँ। मैं निकाल ले चलूँगा ! ठीक है न ! [चारोंओर देखकर] तैयार हो ?

विश्वरथ

हाँ, चलो।

उग्रा

मैं भी इन्हींके साथ चली जाऊँगी।

तुग्र

तू पागल हुई है ?

उग्रा

हाँ, जहाँ कौशिक जायँगे वहीं मै भी जाऊँगी।

तुग्र

देखना ! पीछे पछताना पड़े तो मुझे दोष न देना। विश्वरथ ! यह क्या कर रहे हो ? शम्बरकी कन्याको क्या अपने यहाँ दासी बनाने ले जाना चाहते हो ?

विश्वरथ

तुग्र ! मैं वचन देता हूँ—चलो। यदि मैं भरतोंका जनपति हुआ तो उग्रा मेरा राजमहिषी होगी।

तुग्र

राजमहिषी ? तुम्हें देवोंकी सौगन्ध है ?

विश्वरथ

हाँ, मुझे देवोंकी सौगन्ध है। महर्षि लोपामुद्रा साक्षी हैं।

[लोपामुद्रा सिर हिलाकर अनुमति देती हैं।]

तुग्र

यह क्या ? [कोटके नीचे देखता है]

विश्वरथ

[एकाग्र दृष्टिसे] अथर्वणकी सेना पास आ रही है।

लोपामुद्रा

चलो। [जाने लगते हैं।]

तुग्र

[जाने लगता है।] चलो।

उग्रा

अरे ! यह क्या ! [नीचेसे आगकी लपटें दिखाई पड़ती हैं ।]

विश्वरथ

[उग्राके कन्धेपर हाथ रखकर] घबराओ मत । यह तो नीचेके जंगलोंकी आग बढ़ रही है ।

तुग्र

[ओठपर ओठ दबाकर] हमारी जनता जीवित जलकर मर रही है । [संशयसे खड़ा रह जाता है ।] मैं इन्हे बचा रहा हूँ किन्तु उग्रकाल......

लोपामुद्रा

तुग्र ! दयार्द-हृदयको देवता कभी कष्ट नहीं देते, चलो ।

तुग्र

चलो—धीरे धीरे [रुकता है]

दस्युगण

[नेपथ्यमे] ई,-ई-ई-ऊ,

[दौड़ते हुए पैरोंकी आहट सुनाई पड़ती है ।]

उग्रा

अरे बाप रे ! [आँखोंपर हाथ रख लेती है ।]

ऋक्ष

[रुदनके स्वरमें] मेरे देवोंके देव !

विश्वरथ

कौन है ? [साहसके साथ आगे आता है । भैरव और चार सशस्त्र योद्धा आते हैं और तीनों आर्योंको पकड़ते हैं । तुग्र दूर खड़ा रहता है । भैरव क्रूर हास्यके साथ लोपामुद्राकी ओर देखता है ।]

भैरव

मैं हूं मैं [विजयी स्वरमें] उग्रकालने तुम्हे बुलवाया है। [उग्रा भ्रूभंग करके उसकी ओर देखती रह जाती है। उग्रा से] लड़की! तू भी यहीं है क्या?

उग्रा

[गर्वसे सिर ऊँचा करके] ई-ई-ई [दौड़कर चली जाती है।]—ऊ—

भैरव

तुग्र! उसे पकड़ो।

तुग्र

[क्रोधपूर्वक] नहीं।

[परदा गिरता है।]

चतुर्थ अंक

[दूसरे दिन तड़के। थोड़ी देर में अंधकार दूर हो जाता है, प्रकाश बढ़ता है और सूर्योदय होता है।

पशुपति उग्रकालका खुला स्थानक। बीचमें दूरपर उग्रकालका बड़ासा काला लिंग है। उसपर खोपड़ियोंकी माला चढ़ी हुई है। लिंगके आस पास स्थानककी सीमा बाँधनेके लिए ऊँचे पतले पत्थरोंकी स्तम्भावलि बनाई गई है। उसके ऊपर किसी प्रकारका छाजन नहीं है। गगन में टिमटिमाते हुए, बढ़ते हुए तारे, श्वेत रंगके पर्देके पीछे छिपते चले जा रहे हैं। आगेकी ओर एक स्तम्भ से लोपामुद्रा बँधी हुई है। उसके पास के स्तम्भ से ऋक्ष बँधा हुआ है। ऋक्ष बँधा ऊँघ रहा है। लोपामुद्रा और विश्वरथ, थके हुए, उदास और उनींदे हैं। उनके स्वर धीमे और निराशामय हैं। कभी कभी उनका स्वर शिथिल होकर लम्बा हो जाता है। बोलते हुए कभी वे अकारण अटक जाते हैं। परदा खुलता है तब ऐसे ही स्वरमें विश्वरथ बोल रहा है।]

विश्वरथ

नहीं! हम नहीं मर सकते—कभी नहीं। वरुणदेवने कई बार मुझे आश्वासन दिया है…… ……अपनी आँखोंके सामने मुझे दिखाई पड़ रहा है। ··· ·· आर्योंको मैं देख

रहा हूँ··· ···वे विश्वविजेता ··· गिरि और सरिताएँ लाँघ कर, दस्युओंका दमन करके चारों दिशाओंमे इन्द्रकी जयघोषणा करते हुए··· ·आर्य वीरोंकी सेना दिखाई पड़ रही है। एकके पीछे एक वे आगे बढ़ते आ रहे हैं। उनके कण्ठोंमें विजय-मालाएँ हैं, नयनोंमे उल्लास है, हृदयमे दिव्य प्रेरणा है। सारा जगत उनके चरणोंपर लोट रहा है। [आकाशकी ओर दृष्टि लगाए रहता है।]

लोपामुद्रा

और क्या दिखाई पड रहा है ?

विश्वरथ

[उच्च स्वरसे] मुझे सत्य, ऋत और तपकी त्रिवेणी बढ़ती हुई दिखाई पड़ रही है। भगवती, आप जैसे पुण्यात्माओंके समूह तपके द्वारा प्रजाका उद्धार करते हुए दिखाई पड़ रहे हैं। [शिथिल स्वरमें] आप जैसोंने जो कुछ देखा है, उसके अमर मन्त्र कालान्त तक हमारी सन्तानोंको पथ पदर्शित करते दिखाई पड रहे हैं। [नींदका झोंका आ जाता है। जागकर] मैं क्या बक रहा हूँ ? भगवती ! क्षमा करना।

लोपामुद्रा

तू बक नहीं रहा है पुत्रक ! तेरी वाणीमे वरुण बोल रहे हैं।

ऋक्ष

ओ—अरे—ओ [सब चुप हो गए हैं, कुछ समय बीतता है। विश्वरथ नींदकी झोंक में, थोड़ी देरके लिये सिर झुका देता है। लोपामुद्रा उसे स्नेहपूर्वक देख रही है।]

विश्वरथ

[नींदमें] अग्नि—जमदग्नि ! तुम्हें यह—

लोपामुद्रा

[धीरे से] पुत्रक ! पुत्रक ! [आँखों द्वारा ही दुलार करती है।]

विश्वरथ

[चौंककर] ओ-ओ ! भगवती ! क्षमा करना ! मुझे नींद आ गई थी।

लोपामुद्रा

[धीरे धीरे] विश्वरथ ! तन्द्रिल पृथ्वीपर निःशब्द रात्रि फैली हुई है ! देखो……वन भी सोए हुए हैं। गिरिगह्वर भी निद्रा ले रहे हैं, पक्षीभी पक्ष समेट कर नींदमें मग्न पड़े हैं, थका हारा चन्द्रमा भी अस्त होने जा रहा है और उनके साथ साथ भगवान सप्तर्षि भी। अभी-अभी उषा देवीके दर्शन होंगे। और फिर प्रिय ! हम साथ साथ यमके सदनको चले जायँगे। देखो ! देखो व्योम के सहस्रों नयन कैसे टिमटिमा रहे हैं ? वे हमारा अमृतमय स्वागत कर रहे हैं। क्यों ?

विश्वरथ

[सखेद] मेरे भी धन्य भाग्य हैं कि मैं आपके साथ यमराजके चरणोंमे पहुँचूंगा !

लोपामुद्रा

यह भी कैसी विचित्र घटना है ? बरसों पहले जब तुम पहले पहल मिले थे तब कौन कह सकता था कि हम लोग इस प्रकार साथ-साथ शम्बरके गढ़में इन असुरोंके देवके भोग बनेंगे ?

विश्वरथ

मैंने अभी यही स्वप्न देखा है।

लोपामुद्रा

मै सुन रही थी [हँसकर] तुम्हे वह बात स्मरण है ?

विश्वरथ

[आतुरतापूर्वक] भगवती !

लोपामुद्रा

क्या है ? [फीकी हँसी हँसकर] कह डालो।

विश्वरथ

क्या कहूँ ? न जाने त्वष्टाने आपको इतना अद्भुत क्यों बना डाला ? आपको देखकर मुझे नई दृष्टि प्राप्त हुई है। भगवती······आप द्यौमेंसे उतरकर आती हुई देवीके समान दैदीप्यमान हो। जब आप बोलती हो तो मुझे देववाणी सुनाई पड़ती है। जब आप डग भरती हो तो आपके पदचिह्नोंमेंसे शुद्धिकी सरिता बह निकलती है। [भावभरे स्वर और नयनोंसे देखता है।]

लोपामुद्रा

मैं जानती हूँ कौशिक ! जहाँ मैं गई हूँ, वहाँ पुरुषोंको नई दृष्टि मिली है। [हँसकर] जितने हृदयोंको मैंने संताप दिया है उतनोंको किसीने भी संताप नहीं दिया होगा।

विश्वरथ

संताप दिया है ? यदि वरुण मुझे जीने देते तो आपके एक एक शब्द पर मैं सौ सौ जीवन न्यौछावर कर देता। [सखेद] आप सदा ही देवलोककी सुवास अपने साथ लिए घूमती हैं। आप मेरे मानुषी हृदयको कैसे समझ सकती हैं ?

लोपामुद्रा

मैं भी दैवी नहीं मानुषी हूँ। सबसे अधिक मानुषी हूँ

इसीलिए सब मुझे स्नेहसे सेवन करते हैं।

विश्वरथ

हाँ, आपको देखकर प्रत्येक व्यक्ति यह समझता है कि उसके जीवनकी आशा सदेह विचर रही है। इसका कारण क्या है?

लोपामुद्रा

देव ही जानते हैं।

विश्वरथ

[संकुचित होकर] क्या आपने अपने जीवनकी आशा किसी औरमे नहीं देखी?

लोपामुद्रा

पुत्रक! सभीमे मुझे आभास दिखाई पड़ा है। पर मेरी आशा की ऊषा अभी उदित ही नहीं हुई है और उदित होगी भी नहीं।

विश्वरथ

आपको इसका दुःख नहीं है?

लोपामुद्रा

दुःख क्यों हो? देव मुझपर प्रसन्न हैं। पल-पल उनके साथ तन्मय होनेकी इच्छा मेरे मनमे है। मुझे दुःख किस बातका?

विश्वरथ

भगवती! कभी तो आप हृदयसे सटी हुईसी अत्यन्त निकट दिखाई पड़ती हो—कभी पहाड़ोंकी ऊँचाईपर दूरातिदूर जा बैठती हो। किन्तु इस समय मृत्युसे पहले एक याचना करूँ?

लोपामुद्रा

याचना? पुत्रक! याचनाकी क्या बात है? तुम्हें प्रसन्न

करनेके लिये तुम जो कुछ कहोगे वही करूँगी।

विश्वरथ

तो मेरे हृदयमें एक बात बहुत दिनोंसे बसी हुई है, कहिए तो मरनेसे पहले कह दूँ ?

लोपामुद्रा

प्रसन्नतासे कहो। मैं कई दिनोंसे समझ रही हूँ कि वह कहे बिना तुम सुखी नहीं हो सकोगे ?

विश्वरथ

[लजाकर] समझ रही हो ! तो कहूँ क्या भगवती ? आप मुझसे बड़ी हैं, तपस्विनी हैं, देवोंकी प्रिय हैं ···किन्तु [नीचे देखता है। क्षोभ भरे स्वरमें] मेरी जिह्वा से वह कही नहीं जा सकेगी। मैं आपके सुखके लिये जीना चाहता था, आपकी सेवा करते हुए मरना चाहता था··· ···· · ···मुझे [नीचे देखता रह जाता है ।]

लोपामुद्रा

[लाड़से] लजाओ मत पुत्रक ! न जाने मुझमें क्या है ? अनेक लोगोंको उत्कंठा हुई है। साथ मर रहे हैं, इससे बढ़कर और क्या लाभ हो सकता है ? भरतश्रेष्ठ—

विश्वरथ

[क्षमा-याचनाके स्वरमें] मैं जानता हूँ·····भगवती······ भगवती

लोपामुद्रा

पुत्रक—

विश्वरथ

······किन्तु मेरी एक दीन याचना स्वीकार नहीं करोगी ?

······एक बार—मरने से पहले—मातृभावसे अनेक वर्षों पहले जैसे दिया था, वैसे ही एक बार—क्या चुम्बन नहीं दोगी ?

लोपामुद्रा

एक बार नही अनेक बार। आज देवने मुझे मेरी आँखे ठण्डी करनेवाला पुत्र दिया है। [दोनों नीचे झुकते हैं, मुख बढ़ाते हैं और लोपामुद्रा चुम्बन करती है, फिर धीरेसे दोनों सावधान हो जाते हैं।] देव ! वरुण ! यदि मेरे प्राण देनेसे मेरे पुत्रका प्राण बचता हो तो बचा लो—मै प्राण देनेको प्रस्तुत हूँ।

[थोड़ी देर सब चुप रहते हैं। सुनहरी ऊषासे पूर्व दिशा प्रकाशित हो उठती है।]

लोपामुद्रा

विश्वरथ—देखो वह आ रही है। मेरी जननी! उषादेवी! तुम आ रही हो—जलमे से निकलकर आती हुई सुन्दरीके समान...दुर्जेय मोहकतासे शोभित होकर—अंधकारके सर्पोंको दूर भगाती हुई। दिव्यागना ! आओ, व्योमके द्वार खोलो—सबको जगा दो—पक्षियोंको उड़ा दो। तेज की समृद्धि लुटा दो। तुम्हें देखते ही सब तुम्हारी वन्दना करते हैं। तुम्हीं हो तेजकी माता, व्योमपुत्री !

ऋक्ष

[बड़बड़ाता है।] सुरा—फिरसे दे—नकटी ? [जागता है।] देव मेरे! यह क्या ? [चारों ओर देखकर] अरे बाप रे ! कौशिक ! हमे मरना होगा ! सच बात है या स्वप्न है ? [भीतरसे पैरोंकी आहट सुनाई पड़ती है।] ओ मेरे माता-पिता !

[भैरव उत्साहपूर्वक और तुग्र कठोर भावसे चलते हुए आते हैं। उनके पीछे दो दस्यु और आ रहे हैं। एकके हाथमें लूक है। चारों आकर उग्रकालके पैरों पड़ते हैं। भैरव एक किलकारी मारता है।]

भैरव

उग्रकाल प्रसन्न ! [सब लौटते है और दो दस्यु तीनों आर्यों-के आसपास घासकी पूलियाँ बाँधते हैं] हँसी आ रही है ? अब भी ?

लोपामुद्रा

[तिरस्कारसे] हाँ, मुझे तुझपर दया आ रही है। हमारी मृत्युमे उग्रकाल तुझपर प्रसन्न नही होंगे !

भैरव

[भयंकर हास्यके साथ] अब भी ? आँखोंमे आँसू नहीं हैं ?—गौरांगी ! अभी देवको तेरी श्वेत चमड़ीकी भस्म लगाकर मैं उन्हें प्रसन्न करूँगा।

लोपामुद्रा

[हँसकर] मुझे जीतेजी स्पर्श करके तू पछताया है; अब मेरी भस्मको स्पर्श करके तू जल मरना।

भैरव

तुग्र ! अभी दिन निकलने ही वाला है, ज्यों ही रविबिंबकी कोर दिखाई पड़े कि इन्हें जला देना।

ऋक्ष

अरे बाप रे ! [रोता है]

तुग्र

 अच्छा।

भैरव

मै उग्रकालकी आराधना करता हूँ—ई—ई—ई—ऊ। [फिर लिंगके पास जाकर नाचता है और किलकारियाँ करता हुआ झूमता है। और फिर बेसुध होकर भूमिपर गिरकर झूमता है। दस्यु घासकी पूलियाँ बाँध चुकते हैं। नीचा सिर किए हुए तुग्र दूर पर खड़ा है। सूर्य निकलता है।]

भैरव

[भूमि परसे उछलकर किलकारी मारकर] उग्रकाल प्रसन्न! निकल आया—सूर्य निकल आया—ई—ई—ऊ। लगा दो आग। [तुग्र पत्थरपर रक्खी हुई लूक लेकर धीरे-धीरे आता है। दौड़ती हाँफती हुई, बिखरे हुए बालोंके कारण यक्षिणी-सी दिखाई देती हुई उम्रा आती है।]

उम्रा

ई—ई—ई—ऊ [विश्वरथसे चिपट जाती है, और भीतरसे किसीको बुलाती है। तुग्र स्तब्ध हो जाता है।] आओ आओ, शीघ्र आओ।

तुग्र

[भयकर स्वरसे] अभागी लड़की। यह क्या किया?—

भैरव

[आगे बढ़कर] क्या है? तुग्र—

अगस्त्य

[नेपथ्यमें से] इन्द्र! वृषभोंमे श्रेष्ठ! शत्रुका संहार करो—

भैरव

[भाग जाता है] ओ—

विश्वरथ

[काँपते स्वरमें] गुरुदेव—

ऋक्ष

हे मेरे गुरुदेव ! दौड़ो-दौड़ो !

ऋचीक

प्रतर्दन ! पकड़ो-पकड़ो [ऋचीक वृद्ध है, कोई सत्तर बरसके हो सकते हैं। उनकी कटिमे मृगचर्म, हाथमें परशु तथा छाती और हाथपर कवच है। उनकी श्वेत दाढ़ी उनके सरल मुखकी शोभा बढ़ा रही है। उनके सिरपर जटा है और आँखोंमे उग्रता है। एक छलाँग मारकर वे तुग्रको काट डालते हैं। पीछेसे भरतों-का सेनापति प्रतर्दन आता है और विश्वरथ, लोपामुद्रा और ऋक्षके बन्धन काट देता है। दस्यु भाग जाते हैं।] दुष्ट !

[पीछेसे अगस्त्य मैत्रावरुण आ रहे हैं। मैत्रावरुणके पुत्र, विश्वरथके पुरोहित, ऋषियोंमे श्रेष्ठ अगस्त्यजी लम्बे, श्वेत और गौरांग हैं। उनकी दाढ़ी काली और छोटी है। उनके तेजस्वी कपालपर दाईं ओर बाल सवाँरे हुए हैं। उनकी लम्बी सुरेख आँखोंमें तेज भरा हुआ है। उन्होंने कवच पहन रक्खा है। धनुष की प्रत्यंचा खींचते समय हाथपर चोट बचानेके लिए चमड़ेका पट्टा बाँधे हुए हैं। उनके एक कंधेपर धनुष है और दूसरे कंधेपर तूणीर है। उनके सिरपर शिरस्त्राण है।]

अगस्त्य

[स्नेहपूर्वक विश्वरथसे भेंट करके] पुत्रक !—[प्रतर्दनसे] जाओ, सबका संहार करो और हमारी सेनाको गढ़के भीतर प्रवेश करने दो।

[प्रतर्दन जाता है।]

लोपामुद्रा

महाअथर्वण ! मेरा भी प्रणाम। [ऋचीक लोपामुद्रासे भेंटते हैं।]

ऋत्त

गुरुदेव। यह ऋत्त तो रही गया। यह भी प्रणाम करता है आपके पैरोंकी धूल माथेपर धरता है। धन्य हैं गुरुवर्य! धन्य हैं! [अगस्त्यके पैरों पडता है। वे उसे उठाकर गले लगाते हैं।]

विश्वरथ

महाअथर्वण ! मैं अभिवादन करता हूँ। [विश्वरथ पैरों पडता है। ऋचीक उससे भेंट करते हैं।]

लोपामुद्रा

[अगस्त्यसे] महर्षि ! मेरा प्रणाम स्वीकार करेंगे न ? [वह मोहक दृष्टिसे देखती है।]

अगस्त्य

[संकुचित होकर] आशीर्वाद भारद्वाजी ! [गम्भीर भावसे हाथ फैलाकर] बहुत बरसोंपर तुम्हें देखा है।

लोपामुद्रा

[हँसकर] मैत्रावरुणकी महिमासे मैं अपरिचित नहीं हूँ। [पीछे त्रस्त स्त्रियोंका रोना चिल्लाना सुनाई पडता है। दागी दौड़ती हुई आकर विश्वरथके पैर पकड़कर गिर पड़ती है। उसके पीछे प्रतर्दन खड्ग लेकर आता है।]

दागी

बचाओ कौशिक ! बचाओ !

विश्वरथ

[भ्रूभंग करके] प्रतर्दन ! यह क्या काण्ड मचा रक्खा है ?

प्रतर्दन

[असमजसमे पड़कर] गुरुदेवकी आज्ञा—[अगस्त्य दागीके बाल पकड़कर उठाते हैं। और उसे प्रतर्दनको सौंप देते हैं। विश्वरथ क्रोधमें भरकर देखता रह जाता है।]

अगस्त्य

पुत्रक ! तू नहीं समझता है। दस्यु मात्रका सहार करना होगा। देवोंकी आज्ञा है।

दागी

ओ—ओ—[प्रतर्दन दागीको पकड़कर खींचता है।]

विश्वरथ

[क्रोधसे] गुरुदेव ! दस्युओंके देव भले ही ऐसी आज्ञा दें किन्तु हमारे देव कैसे दे सकते हैं ?

अगस्त्य

अभी तेरा माथा ठिकाने नहीं है। फिर बतावेंगे। चलो प्रतर्दन। [दोनों दागीको ले जाते हैं। दूरपर मौन खड़ी हुई शाम्बरी बेसुध होकर गिर पड़ती है।]

विश्वरथ

[व्याकुल होकर] दस्युमात्रका संहार ! [लोपामुद्रासे] भगवती ! शाम्बरी कहाँ है ?

लोपामुद्रा

यह रही। [भूमिपर बैठकर उग्राको चेतन करनेका प्रयत्न करती है। विश्वरथ देख रहा है।] मूर्छित हो गई है। [ऋचीकसे] महाअथर्वण ! क्या आपने भी चढ़ाई की है ?

ऋचीक

जब सुना कि शम्बर तुम्हे अपहरण कर लाया तो मेरा रक्त उबल उठा। ग्राम-ग्राममे मेरे पत्तधारी घुड़सवार घूम गए और क्षण भरमे सब आ पहुँचे। दिवोदास भी आए हैं?

लोपामुद्रा

आएँगे क्यो नही! मैं उनकी आँखों के आगे बड़ी हुई हूँ। मुझपर किसकी ममता नहीं है?

दस्युगण

[नेपथ्यमे मरते हुए दस्युओंका चीत्कार सुनाई पड़ता है।] ओ—ओ—ओ।

विश्वरथ

[उग्रतापूर्वक] महाअथर्वण! यह क्या हो रहा है?—[ओठ पीसकर] बंद करो।

ऋचीक

मूर्खता न करो! लोपामुद्राको उठा ले आनेवालेका तो अंत होगा ही न?

विश्वरथ

किन्तु ये तो स्त्रियाँ हैं।

ऋचीक

[ँसकर] जब इन्द्र कुपित हो जायँ, तो कौन सहायता कर सकता है!

विश्वरथ

[एकाएक नीची दृष्टि करके] भगवती! शाम्बरी आँख खोल रही है या नहीं?

लोपामुद्रा

[आँचलसे हवा करती हुई] अभी सचेत हुई जाती है।

ऋचीक

यह कन्या बड़े समयपर आ पहुँची। यह मार्ग न दिखाती तो गढ़ जीतना सहज नहीं था।

लोपामुद्रा

और हम लोग जलकर भस्म हो जाते।

विश्वरथ

[चकित होकर] क्या आप लोगोंको शाम्बरी लाई है--?

ऋचीक

[हँसकर] दस्युकन्या ही तो ठहरी। अपने पिताका गढ़ स्वयं अपने हाथो हमे सौंप दिया।

लोपामुद्रा

[उलाहना देते हुए] महाअथर्वण! यह तो कौशिककी पत्नी है। प्रेमकी रक्षाके लिये इसने स्वजनोंका भी विनाश किया है।

ऋचीक

कौशिककी पत्नी! यह दासी—

विश्वरथ

यह तो राजकुमारी है।

ऋचीक

हाँ-हाँ—थी! अब नहीं है!

उग्रा

[चेतमें आते हुए] ओ—ओ—कौशिक—[लोपामुद्राके गले लिपटकर] गौरांगी! मेरा कौशिक कहाँ है? [विश्वरथको देखकर] बच गया? उग्रकालने कृपा की है।

दस्युगण

[नेपथ्यमें मरते हुए दस्युओंका चीत्कार]

ओ—ओ !

उग्रा

[घबराकर बैठ जाती है ।] यह तो—ओह—[चिल्लाकर] मेरी माँ ! [उठनेका प्रयत्न करती है ।]

विश्वरथ

तुम बैठी रहो । मैं जाता हूँ । [जाने लगता है ।]

ऋचीक

[विश्वरथको रोककर] सावधान । तुम बीचमें बाधा नहीं दे सकते ।

दस्युगण

[नेपथ्यमें चीत्कार] ओ—ओ !

उग्रा

[चिल्लाकर] ओ कौशिक ! बचाओ-बचाओ ! [रोती है ।]

आर्यगण

[नेपथ्यमें सैनिकोंका घोष] भरत श्रेष्ठ कौशिककी जय !

विश्वरथ

मेरे भरतोंके हाथ यह घोर कुकर्म करा रहे हो ?

ऋचीक

[कठोर होकर] तुम यहीं ठहरो । मैं जब कहूँ तब जाना ।

लोपामुद्रा

[उग्राको सहलाकर] महाअथर्वण ! इस बालिकाको यहाँसे कहीं और ले जाना चाहिए—

ऋचीक

अभी भेजे देते हैं। [दौड़ते हुए पैरों की आहट सुनाई पड़ती है। और हाथमें खड्ग लेकर प्रतर्दन आता है।]

प्रतर्दन

राजा दिवोदास ने शम्बरको पकड़ लिया है! अभी यहाँ लिए आ रहे हैं।

उमा

[डाढ मारकर रोती है।]

शम्बर? मेरे पिता पकड़े गये? ओ मेरे पिता—[हाथ जोड़कर] कौशिक! जाओ, जाओ, उन्हे बचाओ।

विश्वरथ

[उमासे] मैं जा रहा हूँ। [जाता है]

ऋचीक

प्रतर्दन! जाओ कौशिकके साथ। इनका जीवन सुरक्षित नहीं है।

प्रतर्दन

जैसी आज्ञा। [जाता है]

उमा

[रो रही है] गौरांगी! मेरे पिताजीको पकड़कर ये सब क्या करेंगे?

लोपामुद्रा

बेटी! करेंगे क्या! पकड़ कर छोड़ देंगे—

उमा

[चिंतित होकर] और कौशिकको तो कुछ नहीं होगा न!

ऋचीक

[सिर हिलाकर] कुछ पागल जान पड़ती है !

लोपामुद्रा

महाअथर्वण ! दुखियाकी हँसी मत उड़ाओ, उसपर दया करो। आपके सारे सप्तसिन्धु भरमे ऐसी सरल-हृदया लड़की मैंने नहीं देखी। [उग्रासे] कुछ न होगा। [उसे गोदमें सुला लेती है, ऋचीकसे] महाअथर्वण ! वरुणराज कैसे हँस रहे हैं ? [कुछ देर सूर्यकी ओर देखकर] इनका महालोचन खुल गया है ! भार्गव ! देखिए वे घटघटकी बात जानते हैं और मनके भावोंको भी परखते हैं—हमारे और इन सबके। द्यावा-पृथिवीके नाथ ! कैसी सुन्दर भव्यता में प्रकाशित हो रहे हो ! और हम यह क्या कह रहे हैं ?

ऋक्ष

भगवती ! जब तुम वरुणके साथ बातें करने लगती हो, उस समय मुझे बड़ी अच्छी लगने लगती हो।

लोपामुद्रा

[कठोरतापूर्वक] क्यों ऋक्ष ! तुमसे बोले बिना नहीं रह गया ? [नेपथ्यमें कोलाहल होता है।] अरे यह क्या !

शम्बर

[नेपथ्यमें घहराते हुए स्वरमें] उग्रकालकी जय !

उग्रा

ओ मेरे पिता—[आँखें फाड़कर खड़ी होना चाहती है।]

अगस्त्य

[नेपथ्यमें] मारो ! संहार करो दस्युओंका—

[मारकाटकी ध्वनि सुनाई पड़ती है। एक भयानक चीत्कार

बड़ी देरतक सुनाई पड़ता है और किसीके वध होने का स्वर सुनाई पड़ता है।]

उग्रा

ओः—[मूर्छित हो जाती है।]

लोपामुद्रा

महाअथर्वण ! मैं नहीं जानती थी कि मैत्रावरुण ऐसे योद्धा हैं। [उग्राको सहलाते हुए] अरे ! यह बालिका मूर्छित हो गई ·····बेचारी· ···

[उग्राको बयार करती है।]

ऋचीक

लोपामुद्रा ! मैंने बहुतसे ऋषि देखे किन्तु अगस्त्यके समान वायवान्, तेजस्वी और देवप्रिय दूसरा नहीं देखा।

लोपामुद्रा

किन्तु दस्युओंका विनाश इन्हें बड़ा प्रिय है।

ऋचीक

ऐसे दुष्ट देवताके पूजकोंका और क्या हो सकता है ? अभी ही तुम्हारा भोग ले लेनेवाला था।

लोपामुद्रा

विश्वरथकी बात असत्य नहीं प्रतीत होती ? इनके और हमारे दानाके देव ही यदि संहारकी आज्ञा देते हैं, तो दोनोंमें भेद ही क्या रह जाता है ?

दिवोदास

[नेपथ्यमें] मैत्रावरुणको बुलाओ। लाओ उन्हें—

[दिवोदास अतिथिग्व आते हैं। वे लम्बे और विशाल वक्षवाले हैं। उनकी वृद्ध स्नायुओंमें अभी अमेय बल दिखाई

देता है। उन्होंने कवच और शिरस्त्राण पहन रक्खा है। उनके हाथमें माला है। चार मनुष्य घायल शम्बरको रस्सेसे बाँधकर, घसीटते हुए लाते हैं। वह काला और प्रचण्ड योद्धा है। उसने भी हाथ पैर और छाती पर मटमैला कवच पहन रक्खा है। उसके बाल बिखरे हुए हैं और सिरमेंसे रक्त बह रहा है। उसकी आँखें लाल हो गई हैं! वह लड़खड़ाता हुआ आता है। उसकी छातीमें एक बाण लगा है। उसकी चेतना पल-पल पर कम होती दिखाई दे रही है। सैनिक उसे खड़ा रखना चाहते हैं पर शम्बर खड़ा नहीं रह सकता है और गिर पड़ता है।]

दिवोदास

महाअथर्वण! अन्तमें यह दुष्ट पकड़ा गया—ठीक। [लोपामुद्राको देखकर हर्षित होकर पास आता है।] लोपामुद्रा! कैसी हो? [लोपामुद्रा उठकर भेंटती है।]

लोपामुद्रा

[हँसकर] आप सब लोग आ पहुँचे इसीलिये मुझे जीवित देख रहे हो।

दिवोदास

[विजयके भावसे] मेरी भारद्वाजीको जो स्पर्श करता है उसकी ऐसी ही दशा होती है! अन्तमें दुष्ट पकड़ा ही गया।

ऋचीक

अतिथिग्व। शतमन्युको अन्तमें तुमने सन्तुष्ट कर ही लिया। [उग्रा चेतमें आकर पड़े हुए शम्बरको देखती है। वह पगलीसी उठती है और उसके पास जाती है।]

उग्रा

कौन पिताजी?—ओ—मेरे पिता जी!

लोपामुद्रा

[उसके पास जाकर, शम्बरके पास बैठती है।] घबराओ मत। मैं उन्हें अच्छा किए देती हूँ।

उग्रा

गौरांगी! मेरे पिताजीको अच्छा कर दो। करो-न—तुम्हारे देव इन्हें अच्छा कर देंगे!

लोपामुद्रा

करती हूँ घबराओ मत, बेटी।

[वह शम्बरके बाल सरकाकर रक्त पोंछती है और मन्त्र पढ़ने लगती है। अगस्त्य उत्साहपूर्वक आते हैं—और लोपामुद्राको शम्बरपर मंत्र पढ़ते हुए देखकर क्रुद्ध होकर खड़े रह जाते हैं।]

अगस्त्य

[कठोरतापूर्वक] भारद्वाजी! क्या कर रही हो?

लोपामुद्रा

[गम्भीर होकर] अश्विनों का आवाहन कर रही हूँ—मरते को बचा रही हूँ!

अगस्त्य

ऋषियोंकी मन्त्र विद्या असुरोंके लिये नहीं है।

दिवोदास

लोपामुद्रा! इसे नहीं बचाना चाहिए!

लोपामुद्रा

[गौरवसे आँखें उठाकर] यह दानव है सही, पर वृद्ध और दयालु है। इसने हमें जिलाया है और इसकी कन्याने हमें छुड़ाया है!

अगस्त्य

[तिरस्कारपूर्वक] कितने ही आर्योंके रुधिरसे इसके हाथ लाल हैं। न जाने हमारी कितनी धेनुओंके माँससे इसकी यह देह बनी है!

उग्रा

[लोपामुद्रा का हाथ पकड़कर गिडगिड़ाती है।)

गौरांगी! इस भयानक दुष्टके पाससे पिताजीको दूर ले चलो।

अगस्त्य

इसे अंधार देशकी यात्रा करनी है।

लोपामुद्रा

[समझाते हुए] मैत्रावरुण! हम ही यदि दयाहीन हो जायँगे तो देव और दानवके बीच भेद क्या रह जायगा!

दिवोदास

लोपामुद्रा! इसे मर जाने दो!

अगस्त्य

भारद्वाजी! [भभकती आंखोंसे] अग्निदेवकी आन है तुम्हे—

ऋचीक

[डरावनी आंखोंसे अगस्त्यका हाथ पकड़कर] नहीं मैत्रावरुण!

[पलभरके लिये अगस्त्य और ऋचीक एक दूसरेकी ओर देखते हैं। अगस्त्य संयत होकर शपथ देते देते रुक जाते हैं।]

शम्बर

[चेतमें आकर] ओ—ओ—

दिवोदास

[पास जाकर] जी रहा है, जी रहा है !

[सब देखते रह जाते हैं। शम्बर सिर उठाकर बैठ जाता है और द्वेषपूर्वक दिवोदासको देखता है।]

शम्बर

[हिचकिचाते हुए कुण्ठित स्वरमें] कौन ·····दिवोदास ? अन्तमें तू सफल हो गया ? दुष्ट ! क्यों मेरे पीछे पडा था ?··· मेरे पीछे ? [उग्रकालके लिंगकी ओर देखता है।] ओ पशुपति ! कहाँ हूँ ? [लिंग पर दृष्टि ठहराकर] उग्रकाल भैरवनाथ ! [सिर नीचा करके] मेरा गढ़ गिर गया····· और मेरी प्रजा······ [दाँत किटकिटाकर देखता है। दिवोदाससे] पापी ! हमारे पशुपति तेरा सर्वनाश कर डालेंगे। [सिर झुका लेता है।]

उग्रा

[चिपटकर] पिताजी ! पिताजी !

लोपामुद्रा

[सहलाकर] भाई शम्बर ! शान्त हो जाओ।

शम्बर

[उग्राको आँखें फाड़कर देखता है। अत्यन्त क्रोधपूर्वक] कौन उग्री ! दुष्टा ! अपने पतिकी रक्षाके लिये शत्रुको बुला लाई ? माता-पिताको मरवा डाला ? प्रजाका वध करा डाला ? अघोरकर्मा—

अगस्त्य

[तिरस्कारपूर्वक] मृत्युके द्वारपर खड़ा है। किन्तु अब भी तुझे सुबुद्धि नहीं आई ?

अगस्त्य

[अधीर होकर] बस बहुत हुआ, चलो।

लोपामुद्रा

[अगस्तयसे कठोर होकर] ठहरो! [शम्बरसे स्नेहपूर्वक] दस्युनाथ! अधीर न बनो!

[शम्बरकी पीठपर हाथ फेरती है।]

उग्रा

[गिड़गिड़ाकर] पिताजी। [सिसकती है]···पिताजी···

लोपामुद्रा

[सहलाकर] शम्बर!

अगस्त्य

[भ्रूभंग करके] अब हमे चलना चाहिए।

दिवोदास

[शान्तिसे] लोपामुद्रा रोक रही है।

शम्बर

[भावभरी आँखोंसे लोपामुद्राको देखते हुए] लोपा···मुद्रा। [घबराता है] ओः!······मुझे उग्रकाल बुला रहे हैं।··· ·· उग्रकाल—पशुपति। इन सबका संहार करना।

अगस्त्य

ये हैं तेरे देव ··· [उग्रकालके लिंगकी ओर हाथ करके हँसते हैं।]

शम्बर

[प्रयत्नपूर्वक चेतमें आता है और अगस्त्यकी ओर देखता है।] ये देव? अगस्त्य! यह तो मेरे पशुपतिकी भूमि है, तेरी और तेरे देवकी नहीं। तू और तेरे देव दोनों ही मिट

जाओगे। किन्तु स्मरण रखना कि जहाँ भी सूर्य तपता है वहीं पशुपति राज करेंगे। [लोपामुद्राकी ओर देखता है। उसकी आंखोंमेंसे आवेश दूर होकर कोमलता आ जाती है।] लोपामुद्रा! जीवनभर मुझे इन दुष्टोंने व्यथित किया है एक तुम—

उग्रा

[रोती हुई] पिताजी—

शम्बर

लोपा—पा—[स्वर रुँध जाता है वह भूमिपर सिर डाल देता है।] ओः—[गला भरा जाता है। उसका शरीर ऐंठता है और वह प्राण त्याग देता है। लोपामुद्रा उसकी आँखें बंद कर देती है।]

उग्रा

ओः—मेरे—पिताजी! [शम्बरके शवपर गिरती है।]

लोपामुद्रा

[खड़ी होकर] शरीरसे दस्यु था पर इसका हृदय कंचनके समान था।

अगस्त्य

[दिवोदाससे] राजन्! आज हमारी तपस्या सफल हुई।

दिवोदास

[देखते रहकर] बड़ा पराक्रमी था। इन्द्र! मैं तेरा कृपापात्र हो गया। [दिवोदास तृत्सु श्रेष्ठकी घोषणा सुनाता है।] सेना आ गई है या नहीं?

ऋचीक

मेरे सैनिक भी आ गए होंगे।

दिवोदास

गुरुवर्य। तृत्सु सेना आ पहुँची है। मैं देख आऊँ, गढ़ पर अधिकार हो गया है या नहीं।

अगस्त्य

अच्छी बात है। पधारिए! मैं यहीं हूँ।

दिवोदास

[ऋचीकसे] आप आ रहे हैं न?

ऋचीक

चलिए [दिवोदास और ऋचीक जाते हैं।]

अगस्त्य

[आकाशकी ओर देखकर हँसते हुए।]

देव! आज प्रसन्न हो?

उग्रा

ओ मेरे दस्युनाथ। अपनी उग्रीको कहाँ छोड़ चले? [विश्वरथ उद्विग्न होकर आता है। प्रतर्दन और एक भरत योद्धा आता है।]

विश्वरथ

क्या हुआ? शम्बर मर गया? शाम्बरी—

उग्रा

[विश्वरथके पैरोंसे लिपट जाती है।] कौशिक—

अगस्त्य

भारद्वाजी! हट जाओ तो इस पितृघातिनीको यहीं समाप्त कर दूँ?

विश्वरथ

[क्रोधसे] पितृघातिनी! यह तो मेरी—भरतोंके जनपति

की पत्नी है। [उग्राको गोदमें ले लेता है।]

अगस्त्य

इसका स्थान इसके पिताके साथ है।

उग्रा

[मरणके भयसे विश्वरथसे लिपटकर]

ओ कौशिक! यह भयानक पुरुष मुझे मार डालेगा। इससे मुझे बचाओ।

विश्वरथ

[भयंकर संकल्पके साथ] गुरुदेव! शम्बरी मेरी है। सविधान। इसे हाथ लगाया तो!

अगस्त्य

[क्रोधसे] मूर्खता न करो वत्स! देवोंके द्वेष्टाओंको कोई अधिकार नहीं है कि भूमिको अपने भारसे पीड़ित करें! दूर हटो प्रतर्दन। भरतश्रेष्ठको दूर ले जाओ!

उग्रा

[भयत्रस्त] मैं अकेली हूँ—तुम्हारी हूँ—मुझे छोड़ न जाइएगा।

विश्वरथ

शान्त हो जाओ, उग्रा! गुरुदेव! [उग्राको पीछे करके उसके शरीरके आड़े खड़ा हो जाता है।] मेरे पाससे शाम्बरी को ले जाना चाहते हो? [अगस्त्यकी ओर उग्रतासे देखता है।]

अगस्त्य

[पास आकर] दूर हटो—

विश्वरथ

[क्रोधसे] प्रदर्दन! मेरे भरत वीरों! देवोंकी शपथ खाकर

मैने शाम्बरीको राजमहिषीके पदपर प्रतिष्ठित किया है। तुम्हें जह्नु और गाधिकी शपथ है कि एक भी भरतके जीते इसका बाल भी बाँका न होने देना।

प्रतर्दन

[उग्राके पास खड़े रहकर] जैसी आज्ञा।

अगस्त्य

पागल हुए हो? [विश्वरथको दूर हटानेको बढ़ते हैं।]

विश्वरथ

[भयंकर होकर] गुरुदेव! मैं तो आपका कुछ नहीं कर सकता हूँ। किन्तु आप मेरे प्राण ले सकते हैं? शाम्बरीने इन प्राणोंको उग्रकालके आगे बलि होनेसे बचाया था। उग्रमूर्ति! अब इस निर्दोषको मारनेसे पहले आप मुझे मार सकते हैं। लीजिए! मैं शम्बरकन्याका पति हूँ। क्षमाके योग्य नहीं हूँ। मारिए।

[स्थिर नयनोंसे देखता रह जाता है।]

अगस्त्य

[दाँत पीसकर शस्त्र उठाते हैं] क्या? मेरी प्रतिस्पर्द्धा कर रहा है—

लोपामुद्रा

[विश्वरथ और अगस्त्यके बीच आ खड़ी होती है।] यह क्या हो रहा है मैत्रावरुण? इस दुःखिनीके आँसुओंसे भी तुम्हारे क्रोधकी ज्वाला नहीं बुझ सकी? [वह अगस्त्य की ओर देखती है, अगस्त्य कुण्ठित होकर रुक जाते हैं। दोनोंकी दृष्टि दो तलवारोंके समान टकराती है। उनमें से चिनगारियाँ झड़ती हैं।]

लोपामुद्रा

पुत्र और पुत्रवधू दोनोंको एक साथ मार डालनेपर उतारू हो गए हो ?

अगस्त्य

[क्रोधसे] तुम भी—

लोपामुद्रा

हाँ, मैं भी। [अगस्त्यका सशस्त्र हाथ नीचे गिर जाता है। लोपामुद्रा हँसती है।]

[परदा गिरता है]